आदि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब
की महिमा

डा० के. पी. अग्रवाल

भारत-भारती
२/१८, अन्सारी रोड,
नई दिल्ली-११०००२

अप्रैल, १९८५
चैत्र, २०४२
मूल्य : ६ रुपया

विषय सूची

	प्रस्तावना	... क - च
१.	आदि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की महिमा	.. १
२.	अद्वैतवाद अर्थात एक ही ब्रह्म की सत्ता	... ४
३.	निर्गुण-सगुण	... १०
४.	ब्रह्म-पारब्रह्म	... १३
५.	वेद, स्मृति, शास्त्र, पुराण	... १९
६.	अवतार-भाव	... २६
७.	प्रिया-प्रियतम भाव	... ३५
८.	राम	... ४३
९.	कृष्ण	... ४८
१०.	गुरू, सतगुरु, वाहिगुरु	... ५३
११.	ओंकार	... ५८
१२.	नाम	... ६२

प्रस्तावना

हिन्दू धर्मग्रन्थों में ऐसे बनावटी विश्वासों का विवरण नहीं मिलता जिनके प्रति, बुद्धि की अवहेलना करके, आग्रह किया गया हो। हिन्दू धर्मग्रन्थ आत्मा में अन्तर्हित सत्य की ही साक्षी देते हैं।

जिस सत्य की साक्षी ये धर्मग्रन्थ देते हैं उसमें विद्यमान विशेषता के दो पक्ष हैं। एक ओर तो वह सत्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहने के कारण परम्परागत है। दूसरी ओर उस सत्य का साक्षात्कार सदा ही अपने अन्तर में किया जा सकता है। इस प्रकार सनातन सत्य को प्रवाहमान भाषा में व्यक्त किया गया है।

सत्य के सनातन स्वरूप की परिभाषा एक अन्य प्रकार से भी की जा सकती है। सत्य अनादि है और उसकी पुष्टि के लिए किसी ऐतिहासिक पुरुष का प्रमाण प्रयोजनीय नहीं। सत्य की किसी भी उद्घोषणा को आदिम अथवा अन्तिम उद्घोषणा नहीं कहा जा सकता। इस परिभाषा में ईश्वर के एकमात्र पुत्र अथवा अन्तिम पैग़म्बर का कोई स्थान नहीं।

सत्य का एक तीसरा पक्ष और है। वह यह है कि सत्य का स्वरूप बाह्य नहीं है। सत्य आत्मा का सहधर्मी है, हृदय-गुहा में निगूढ़ है, गगन-गुफा से निर्झरित होता है। सत्य का साक्षात्कार करने के लिए साधना चाहिए, तप चाहिए, आत्म-चिन्तन चाहिए।

दुर्भाग्य का विषय है कि कई-एक ऐतिहासिक घटनाक्रमों के परिणामस्वरूप सत्य की इन विशेषताओं के प्रति हम सचेत नहीं रहे। हिन्दू समाज ने कई-सौ वर्ष तक कठोर विडम्बना का वहन किया है। हमने उस विडम्बना से पार तो पा लिया और हम उससे बचकर निकल भी आए। किन्तु हमारा सत्त्व क्षीण हो गया। हमारी प्राणशक्ति का ह्रास हो गया। हम अपनी मार्मिक संवेदना खो बैठे। हमारी दृष्टि की विचक्षणता चली गई।

उस दिन के ब्रिटिश शासकों ने हमारे इतिहास का निर्माण ही नहीं किया, हमारा इतिहास लिख भी डाला। कुल मिलाकर वे लोग हमारे धर्म तथा धर्मग्रन्थों को जुगुप्सा की दृष्टि से देखते थे। फिर भी वे लोग हमारे धर्म तथा धर्मग्रन्थों का उपयोग हमारे विनाश के लिए करने से नहीं चूके। उन्होंने हमारे धर्म तथा धर्मग्रन्थों का गहन अध्ययन किया। किन्तु उनका मनोभाव मलिन था।

ब्रिटिश शासकों की प्रतिष्ठा बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। हम उनकी धाक मान गए। हमारा अपना संसार सिकुड़ता जा रहा था। हमने अनायास ही अपने इतिहास को, अपने धर्मग्रन्थों को, यहाँ तक कि अपने धर्म को भी ब्रिटिश शासकों की आँखों से देखना सीख लिया।

यह एक विराट प्रसंग है। यहां हम इसके सब पक्षों का लेखा नहीं दे सकते। इस समय तो हम सिक्ख पन्थ तथा गुरु ग्रन्थ के विषय में ही कुछ कहना चाहते हैं।

पिछली शती के मध्य में जब ब्रिटिश विजेताओ ने पंजाब का शासन अपने हाथ में लिया तो वे सिक्ख पन्थ में विभेद के बीज बोने लगे। वे कहने लगे कि सिक्ख धर्म एक बिल्कुल नया धर्म है, इस धर्म का उदय हिन्दू धर्म के विरुद्ध विद्रोह के रूप में हुआ था और सिक्ख गुरु चाहते थे कि यह धर्म अपने विभिन्न और विशिष्ट रूप में ही प्रसार पाए। उन्होंने सिक्ख धर्म के आध्यात्मिक मूल पर भी कुठाराघात किया। उन्होंने यह प्रवाद फैलाया कि सिक्ख धर्म साधारणतया इस्लाम का और विशेषतया सूफीमत का पर्याय है। उनके मत में सिक्ख धर्म का प्रेरणास्रोत सामी (Semitic) है, वह धर्म एकेश्वरवादी (Monotheistic) है, उसकी अपनी किताब (The Book) है, और उसके अपने पैगम्बरों की परम्परा है। सिक्ख धर्म तथा उसके असली पूर्वज हिन्दू धर्म के बीच देखे जाने वाले अपार साम्य को उन्होंने यह कहकर झुठला दिया कि हिन्दू वातावरण में जन्मे-पले सिक्ख धर्म के लिए यह कोरा कुसंयोग मात्र था।

हिन्दू धर्मग्रन्थों में एक विशेष विधा पाई जाती है—नेति नेति की विधा। इस विधा के अन्तर्गत किसी भी सत्य का एक स्तर पर प्रत्याख्यान करके उसी सत्य को एक ऊर्ध्वतर और अधिक मार्मिक स्तर पर प्रतिष्ठित किया जाता है। ईसाई मिशनरी तथा ब्रिटिश शासन के विद्वान इस विधा को समझने में असमर्थ रहे अथवा उन्होंने इसे समझना नहीं चाहा। सिक्खों के धर्मग्रन्थों में पाई जाने वाली नेति-नेति की विधा को पकड़कर वे लोग पुकार उठे कि इन धर्मग्रन्थों में हिन्दू देवताओं को दुत्कारा गया है, हिन्दू धर्मग्रन्थों को धिक्कारा गया है, हिन्दू उपासना का उपहास किया गया है, और हिन्दू कर्मकाण्ड को कोसा गया है। सिक्ख धर्मग्रन्थों के कुछ प्रकरणों को प्रसंग से दूर करके उन लोगों ने अपने मत की पुष्टि का प्रयास भी किया।

ब्रिटिश शासक सब प्रकार से समर्थ थे। उनके पास राजसत्ता का प्रताप था। परिणामस्वरूप उनकी हाँ में हाँ मिलाने वाली एक विद्वत्ता भी इस देश में पनपने लगी। इस विद्वत्ता का पथप्रदर्शन साम्राज्यवाद कर रहा था। साथ ही नए-नए निहित स्वार्थों ने भी सिर उठाया। इन स्वार्थों के लिए पृथकतावादी विचारधारा बहुत लाभदायक थी। वह विचारधारा आज भी विद्यमान है। साम्राज्यवादी राज-

नीति की जिस प्रक्रिया ने उस विचारधारा का प्रवर्तन किया था, वह प्रक्रिया आज भी चल रही है। किन्तु उस प्रक्रिया के मूल में किसी प्रकार का कोई अध्यात्मान्वेषण न किसी दिन था, न आज है।

राजनीतिक स्वाधीनता के लिए संघर्ष करना आसान है। किन्तु सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक समन्वय के लिए संघर्ष करना कठिन काम है। अतएव यह आश्चर्य का विषय नहीं कि विदेशी शासन का विलोप हो जाने के बाद भी हम अपने-आप को उसी शासन की दृष्टि से देख रहे हैं। हम अपने राष्ट्र को एक विराट अध्यात्मसम्पदा के रूप में नहीं देख पा रहे। हम समझते हैं कि यह देश कई-एक ऐसी इकाइयों का जमघट है जिनके बीच सामंजस्य बैठाना सहज नहीं। हम मान बैठे हैं कि यह देश सदा ही विदेशी आक्रमणकारियों की क्रीड़ास्थली रहा है। अतएव यह देख कर कि सिक्ख विद्वत्समाज भी उसी दूषित दृष्टि का शिकार है हमें न तो आश्चर्य होना चाहिए और न शिकायत करनी चाहिए। सिक्ख विद्वत्समाज आज किसी बृहद दृष्टि का परिचय नहीं दे पा रहा। वह विद्वत्समाज ब्रिटिश शासकों तथा ईसाई मिशनरियों द्वारा पढ़ाए गए पाठों की पुनरावृत्ति करता रहता है। इसीलिए वह विद्वत्समाज आत्मविस्मृति और आत्महनन की ओर अग्रसर हो रहा है।

सन्तोष का विषय केवल यही है कि हिन्दुत्व अब अपनी बुद्धि पर छाए हुए तमस् को तोड़ने लगा है। हिन्दुत्व अब मोहनिद्रा से जाग रहा है। हिन्दुत्व आज आत्मचिन्तन में रत है। हिन्दुत्व अब अपने ऐतिह्य का लेखा-जोखा लेने लगा है। पाश्चात्य का अन्धानुकरण करने वाले मनीषियों का अभी भी बोलबाला है। किन्तु हिन्दुत्व को करवट लेते देखकर उन लोगों के बीच एक खलबली मचने लगी है। हिन्दुत्व के नवजागरण को वे लोग कई नामों से कोस रहे हैं। उनका मनभावन नारा है कि हिन्दुत्व पिच्छट (backlash) मार रहा है।

नवजागरण के इस नए यज्ञ में कई-एक सिक्ख मनीषी भी आहूति डाल रहे हैं। उनका मनन गम्भीर है। यह माना कि सिक्ख पन्थ अभी भी एक ऐसे विद्वत्समाज द्वारा अभिभूत है जिसकी जानकारी अत्यल्प है और जिसकी प्रेरणा का स्रोत राजनीति-प्रधान है। यह भी माना कि गम्भीर सिक्ख मनीषियों की बात पर सिक्ख पन्थ का ध्यान बहुत कम जा रहा है। फिर भी यह बात कम महत्त्व की नहीं कि कतिपय सिक्ख मनीषी उस भावना को स्वर देने लगे हैं जो साधारण सिक्ख के मानस में विद्यमान है। साधारण सिक्ख का मानस गवाही देता है कि सिक्ख पन्थ का उदय तथा उत्थान उस विशाल हिन्दू जागरण का अभिन्न अंग था जिसका प्रसार एक समय भारतवर्ष के ओर-छोर तक हुआ था। साधारण सिक्ख जानता है कि सिक्ख पन्थ उस चुनौती का एक प्रत्युत्तर था जो उस दिन एक दीर्घकाल-व्यापी विदेशी शासन ने सारे हिन्दू समाज को दी थी। साधारण सिक्ख यह भी

जानता है कि यह प्रत्युत्तर केवल पंजाब में ही नहीं सारे देश में दिया गया था। पंजाब में इस प्रत्युत्तर ने सिक्ख पन्थ का रूप धारण किया था। परवर्ती काल में जब सिक्ख पन्थ के सैनिक पक्ष की स्थापना खालसा के रूप में हुई तो अनेक हिन्दू परिवारों ने अपने पुत्र उसको अर्पण किए थे। साधारण सिक्ख जानता है कि खालसा उस बृहत्तर समाज का अंग है जिसे सिक्ख पन्थ कहकर पुकारा जाता है और सिक्ख पन्थ स्वयं एक और भी बृहत्तर समाज—हिन्दू समाज—का अभिन्न अंग है। इस समष्टि के भीतर ही खालसा की स्थिति सम्भव है। यदि इस समष्टि को अस्वीकार किया जाता है तो खालसा भी अर्थहीन हो जाता है। विराट हिन्दू समाज के बाहर निकलकर खालसा निस्सार हो जाता है।

पद्मश्री प्रोफेसर अतरसिंह, जो पंजाब विश्वविद्यालय के अन्तर्गत सिक्ख स्टडीज विभाग के अध्यक्ष हैं, लिखते हैं : "सिक्ख पन्थ की स्थिति को किसी प्रकार से पृथक नहीं किया जा सकता। सिक्ख इतिहास तथा सिक्ख संस्कृति की जड़ें हिन्दू इतिहास तथा संस्कृति में बहुत गहरी पैठी हुई हैं। दूसरे शब्दों में वे दोनों प्रायः एक ही हैं।" यह आश्चर्य का विषय नहीं कि सरदार तीरथसिंह, जो उत्तर प्रदेश की विधानसभा में लोकदल के सदस्य हैं, खुलकर कहते हैं कि वे स्वयं "सर्वप्रथम एक हिन्दू हैं, तदनन्तर एक सिक्ख।" यह उस सत्य का उद्घोष है जिसे प्रत्येक साधारण सिक्ख अपने अन्तर की गहराई में अनुभव करता है। प्रत्येक सिक्ख को उसके ऊपर लादे गए कुसंस्कारों से मुक्ति पानी चाहिए और इस सत्य को सरेआम स्वीकार करना चाहिए। अभी कुछ दिन से उसके मन में जो भय बस गया है वह भी तुरन्त दूर हो जाएगा।

इस समस्या का समाधान खोजने वाले प्रत्येक सज्जन से मेरा यह अनुरोध है कि वे श्री सुरैनसिंह विल्खू द्वारा लिखी गई पुस्तक, **आदिग्रन्थ के परम्परागत तत्त्वों का अध्ययन**, अवश्य पढ़ें। पुस्तक का प्रकाशन पंजाब सरकार के भाषा विभाग ने किया है। विद्वान लेखक ने दिखलाया है कि सिक्ख पन्थ के प्रणेता गुरु नानकदेव की वाणी किस प्रकार अकाट्य रूप से उनके पूर्ववर्ती सन्तो की वाणी से जुड़ी हुई है, किस प्रकार नानकदेव सन्तवाणी के परिवेश में प्रकट हुए, किस प्रकार सन्तवाणी अपने से पूर्ववती नाथ पन्थ से जुड़ी हुई है, किस प्रकार नाथ पन्थ स्वयं और भी पूर्ववर्ती सिद्ध साहित्य, जैन मत और बौद्ध धर्म से जुड़ा हुआ है, और किस प्रकार इन समस्त सम्प्रदायों की भावभूमि अन्ततः उपनिषदों में प्राप्त होती है। श्री विल्खू ने एक ओर गुरु ग्रन्थ तथा दूसरी ओर अन्य सम्प्रदायों के साहित्य से सैकड़ों उद्धरण देकर यह साम्य दिखलाया है।

सरदार भगवन्तसिंह सिन्धु एक ऐसे देशभक्त हैं जिन्होंने स्वाधीनता-संग्राम में भाग लिया था और जेल काटी थी। वे विद्वान भी हैं। आजकल वे पंजाब सरकार में एडवोकेट जैनरल का पद सँभाले हुए हैं। अभी कुछ दिन पूर्व उनकी एक

पुस्तक पटियाला से प्रकाशित हुई है—सिक्ख्स् एट क्रॉसरोड्स् (सिक्ख पन्थ संशयग्रस्त)। वे लिखते हैं: "सिक्ख धर्म तथा महान गुरु गोविन्दसिंह जी को महाभारत पढ़े बिना समझना असम्भव है···हिन्दू धर्म तथा सिक्ख धर्म के बीच एक प्रतिशत का भी अन्तर नहीं।" उन सिक्ख विद्वानों को सम्बोधित करते हुए जो मेकॉलिफ का अनुसरण करते हैं, सरदार भगवन्तसिंह कहते हैं: "भगवान राम तथा भगवान कृष्ण के नाम गुरु ग्रन्थ पर छाए हुए हैं। प्रायः एक-तिहाई गुरु ग्रन्थ इन नामों से भरपूर है। इन नामों की महिमा अनेक शबदों में मिलती है।"

यदि यह सब सच है तो सवाल उठता है मेकॉलिफ के मानसपुत्रों की बात सुनी ही क्यों जाती है और क्यों वे लोग सिक्खों को बहकाने में सफल हो सके हैं। सरदार भगवन्तसिंह इस सवाल का उत्तर भी देते हैं। उनका कहना है कि "अधिकतर सिक्ख अब गुरु ग्रन्थ को समझने में असमर्थ हैं।" एक समय गुरु ग्रन्थ जनता द्वारा बोली जाने वाली भाषा में लिखा गया था। किन्तु उसके बाद कई-सौ वर्ष बीत गए। बोलचाल की भाषा में भारी परिवर्तन हो गया। अब तो पढ़े-लिखे सिक्ख भी गुरु ग्रन्थ की भाषा को नहीं समझते। साधारण सिक्ख के लिए तो गुरु ग्रन्थ स्तुति और पूजा का विषय रह गया है। ग्रन्थी लोग भी नहीं जानते कि कहा क्या जा रहा है। वे लोग मधुर स्वर और सम्यक् राग में गुरु ग्रन्थ के शबद गाते हैं। किन्तु अपने ही द्वारा गाए गए शबदों का अर्थ वे लोग नहीं जानते। रटे-रटाए स्वर-विन्यास के परे उनकी पहुँच नहीं रही। ग्रथी लोगों का यह अज्ञान राजनीति-प्रवण सिक्ख विद्वानों को प्रश्रय देता है। ये विद्वान कुछ भी कहें, इनको टोकने वाला कोई नहीं रहा।

डा० पी० के० अग्रवाल की यह पुस्तक उस साहित्य में योगदान है जो हमें गुरु ग्रन्थ के मर्म को समझने में सहायता देता है। गुरु ग्रन्थ के प्रसंग में उनके पाण्डित्य की स्वीकारोक्ति में कई सिक्ख संगतों ने उन्हें सरोपा दिया है। गुरु ग्रन्थ को समझने में उन्होंने गहन-गम्भीर दृष्टि से काम लिया है। उनका मानस गुरु ग्रन्थ के प्रति असीम श्रद्धा से भरपूर है। साथ ही उन्होंने जो कुछ लिखा है वह विवेक और विद्वत्ता से ओत-प्रोत है। उनकी यह छोटी-सी पुस्तक गागर में सागर की याद दिलाती है। गुरु ग्रन्थ के मर्म में पैठते समय वे गीता तथा उपनिषदों के मर्म भी को सहेजने में समर्थ हैं।

डा० अग्रवाल उपनिषदों तथा पुराणों के प्रसंग प्रस्तुत करके हमें दिखलाते है कि गुरु ग्रन्थ कितना पौराणिक और औपनिषदिक है। इन समस्त धर्मग्रन्थों की मूलभूत मनीषा को एक मानते हुए वे लिखते है: "हम यह मानते हैं कि यदि समस्त वेद-शास्त्र, स्मृति और पुराण आदि लुप्त हो जाएं और केवल गुरु ग्रन्थ साहिब ही उपलब्ध रहें तब भी ऋषि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित यह हमारा पुराना धर्म अपने सनातन रूप में सुरक्षित एवं विद्यमान रहेगा।" मैं यह जानता हूँ कि

डॉ० अग्रवाल क्या कहना चाहते हैं। वे हिन्दू धर्मग्रन्थों तथा गुरु ग्रन्थ के गहन सम्बन्ध की ओर हमारा ध्यान खींच रहे हैं। फिर भी मेरे मत में सार को स्पष्ट करने की यह भाषा सर्वथा सम्यक् नहीं है। इसी बात को वे एक अन्य प्रकार से भी कह सकते थे। सत्य की विभिन्न अभिव्यक्तियों के बीच चाहे जितना साम्य क्यों न हो, उन सभी का अपना-अपना स्थान है। अस्तु।

इस पुस्तक में संकलित लेख प्रथमतः एक समाचारपत्र में प्रकाशित हुए थे। अतएव उनमें संक्षेप से काम लिया गया है और उन की भाषा सरल है। किन्तु इस कारण से उनकी गहराई कम नहीं हुई। न ही लेखक की दृष्टि का दाक्ष्य हलका हुआ है। यह पुस्तक हमें विचार करने के लिए विवश करती है, हमें एक चुनौती भी देती है। मुझे तनिक भी सन्देह नहीं कि इस पुस्तक का आकार छोटा होने पर भी इसका विचार महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा। यह हमारे मानस को द्योतित करेगी, हमारा पथ-प्रदर्शन करेगी। इसके द्वारा हमारी अनेक शंकाओं का समाधान होगा।

यह कहना न होगा कि इस पुस्तक में सिक्खों के धर्मग्रन्थ का अनुशीलन है, अकाली दल की राजनीति अध्ययन नहीं। अकाली राजनीति एक स्वतन्त्र प्रक्रिया है। सिक्खों के धर्मग्रन्थ से उसका कोई सम्बन्ध नहीं। न ही सिक्खों के महामहिम इतिहास से अकाली राजनीति का कोई रिश्ता है। सिक्खों के पूर्वज महापुरुषों ने देश की स्वतन्त्रता तथा अखण्डता के लिए जो अपूर्व बलिदान दिए थे सो इसलिए नहीं कि परवर्ती काल में कोई राजनीतिक गुट अपने संकीर्ण स्वार्थों की साधना में उन बलिदानों की दुहाई दे। फिर भी अकाली राजनीति परजीवी जोंक के समान उन महापुरुषों के यश से चिपटी हुई है।

डा० अग्रवाल को सिक्ख धर्म और इतिहास का जितना ज्ञान है उसकी तुलना में मैं अपने-आप को अज्ञ ही मानता हूँ। मेरे लिए यह सौभाग्य का विषय है कि उनकी पुस्तक की प्रस्तावना लिखने का अवसर मुझे प्राप्त हुआ।

डा० अग्रवाल का कर्मक्षेत्र उद्योग और व्यवसाय है। श्रेयस्कर तो यही होगा कि वे अपना सारा समय धर्म की सेवा में लगा दें। इस प्रकार वे राष्ट्र की सेवा भी कर सकेंगे।

मेरा एक सुझाव है। पुस्तक के अगले संस्करण में उन पदों का सरल हिन्दी अनुवाद भी होना चाहिए जो इसमें उद्धृत किए गए हैं। तब पुस्तक को समझने में आसानी रहेगी और पाठकों की संख्या में भी वृद्धि होगी।

नई दिल्ली
रामनवमी, सम्वत् २०४२

रामस्वरूप

१

आदि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब की महिमा

महाभारत को पाँचवाँ वेद माना गया है। युद्ध के पश्चात रणभूमि में उत्तरायण की प्रतीक्षा में वाणों की शय्या पर लेटे हुए पितामह भीष्म को भगवान श्रीकृष्ण ने यह वर दिया था कि वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के बारे में जो कुछ भी कुरुक्षेत्र की पुण्यभूमि में कहेंगे, उसे वेदों के समान ही प्रमाणित माना जाएगा। स्वयं भगवान कृष्ण द्वारा अर्जुन को तीर और तलवार की छाया में दिया गया गीता का उपदेश भी महाभारत का ही अंग है।

हमारी यह मान्यता है कि इस कलियुग में, तीर और तलवार की छाया में संकलित, गुरु ग्रंथ साहिब जी ही ऐसा ग्रन्थ है जो जनसाधारण को आत्मिक शान्ति एवं परम मोक्ष का लाभ सहज रूप में प्रदान कर सकता है। जनभाषा में लिखा गया यह महान ग्रन्थ वेद-शास्त्रों के सभी गूढ़ रहस्यों एवं तथ्यों को अपने में संजोए हुए है। प्रेम, भक्ति और ज्ञान की गंगा, यमुना और सरस्वती का इसमें अद्भुत संगम है। इस त्रिवेणी में सहज स्नान का फल सबके लिए इसलिए सुलभ हो गया है कि ग्रन्थ साहिब की वाणी के पीछे गुरुओं की महान तपस्या एवं सिद्धि का बल निहित है। उसमें परमात्मा की अनुकम्पा मानो सर्वत्र छाई हुई है।

हमारी यह भी धारणा है कि गुरु ग्रन्थ साहिब जी को ठीक प्रकार से वह ही व्यक्ति समझ सकता है जिसने उपनिषदों, स्मृतियों एवं पुराणों का भली-भाँति अध्ययन एवं मनन किया हो। इसी संदर्भ में हम यह मानते हैं कि यदि समस्त वेद-शास्त्र, स्मृति और पुराण आदि लुप्त हो जाएँ और केवल गुरु ग्रन्थ साहिब ही उपलब्ध रहे तब भी ऋषि-मुनियों द्वारा प्रतिपादित यह हमारा पुराना धर्म अपने सनातन रूप में सुरक्षित एवं विराजमान रहेगा।

गुरु ग्रन्थ साहिब मानो एक जहाज है जिसका लक्ष्य है पारब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति। इस भवसागर से पार होने के लिए, माया के इस दुष्कर चक्र से छूटने के लिए और चौरासी लाख योनियों से मुक्ति पाने के लिए गुरु ग्रन्थ रूपी जहाज (बोहित) में हरिनाम की लकड़ी लगी हुई है जिस पर कि संसार के प्रति वैराग्य एवं निस्संगता का पेंट चढ़ा हुआ है और ओंकार की ध्वजा फहरा रही है। रामनाम का इसमें इंजन लगा हुआ है और भक्ति, ज्ञान, प्रेम एवं वैराग्य का

इस में ईंधन पड़ा हुआ है। सगुण और निर्गुण ब्रह्म के बिछौने बिछे हुए हैं, नेति-नेति एवं सोहं जैसे महान वेदांत-वाक्यों के इसमें दिशा-निर्देश याने कम्पास हैं। परमपिता के लीला-अवतारों का यहाँ निरन्तर रागबद्ध कीर्तन हो रहा है। साक्षात् सगुण परमात्मा ही सतगुरु के रूप में इस जहाज के कप्तान हैं। परमात्मा का नामजप ही इस जहाज पर चढ़ने का टिकट है। भला कौन ऐसा आदमी है जो ऐसे सुदृढ़ एवं सुरक्षित तथा सबके लिए सहज एवं सुलभ गुरु ग्रंथ साहिब जी रूपी जहाज पर चढ़कर इस संसार सागर से बिना कष्ट के पार न हो जाएगा ?

गुरु ग्रन्थ साहिब जी में १४३० पन्ने होते हैं, चाहे वह किसी भी भाषा एवं आकार में छपा हो। सारा ग्रन्थ ३१ राग-रागनियों में बँधा है और इन राग-रागनियों का वर्णन भी अन्तिम डेढ़ पन्नों में रागमाला के अन्तर्गत किया गया है। ग्रन्थ में लगभग १०,००० बार हरिनाम, २४०० बार रामनाम, ५५० बार पारब्रह्म, लगभग ४०० बार ओंकार और ३५० बार वेद, पुराण, स्मति, शास्त्रों का उल्लेख हुआ है। इसी प्रकार ग्रन्थ में निर्गुण-सूचक नाम जैसे जगदीश, निरंकार, निरंजन, आत्मा, परमात्मा, परमेश्वर, अन्तर्यामी, पुरुष, करतार आदि का २६०० बार प्रयोग हुआ है। यदि इसमें परमात्मा के लिए 'नाम' शब्द के उपयोग को जोड़ दिया जाए तो यह संख्या बढ़कर ७००० हो जाती है। ग्रन्थ साहिब जी में भगवान के सगुण नाम जैसे गोविन्द, मुरारि, माधव, शालिग्राम, विष्णु, कृष्ण, सारंगपाणि, मुकुन्द, ठाकुर, दामोदर, वासुदेव, मोहन, बनवारी, मधुसूदन, केशव, चतुर्भुज इत्यादि का लगभग २००० बार प्रयोग हुआ है, चाहे देहधारी गुरु के रूप में हो या परमात्मा के रूप में। पौराणिक शब्द जैसे कलिमल, बोहित, चरणकमल, वरुण, यम, धर्मराज, चित्रगुप्त, भवजल, बैकुण्ठ, तीर्थ, कीर्तन आदि का प्रयोग लगभग १७०० बार हुआ है। नेति-नेति, त्रिगुण, ब्रह्मनाद, जीवन-मुक्त, तुरीय, अमृतपद, परमपद, निर्वाण आदि वेदांतिक शब्दों का प्रयोग गुरुग्रन्थ साहिब में लगभग ११५० बार किया गया है।

सभी गुरुओं ने परमात्मा की उपासना, स्वयं को एक सुहागिन नारी मानते हुए, पति के रूप में भी की है। इस सन्दर्भ में एक सुहागिन नारी के रूप में परमात्मा-रूपी पति की प्राप्ति की अन्तर्वेदना बड़े ही मार्मिक रूप में सारे ग्रन्थ साहिब में बिखरी हुई है। इस भाव से सम्बन्धित शब्द जैसे प्रीतम, कन्त, खसम, पति, सुहागिन, दोहागिन, सिंगार, कामिनी, सैयारमण आदि शब्दों का भी २५०० बार उल्लेख आया है। पौराणिक शब्द जैसे कलियुग, धर्मराज, चरणकमल, बैकुण्ठ, कीर्तन, मोक्ष, यम की फाँसी, माया, लख-चौरासी, त्रिभुवन, चार आश्रम, रसातल, पाताल आदि शब्दों का लगभग २००० बार प्रयोग हुआ है। सभी गुरुओं द्वारा

रचित जितने भी पद, दोहे आदि ग्रन्थ साहिब में हैं उनके अन्त में 'नानक' शब्द का प्रयोग हुआ है। इस प्रकार नानक शब्द का प्रयोग लगभग ५००० बार, कबीर का ५०० बार तथा अन्य सन्तों का नाम लगभग ३०० बार आता है।

गुरु ग्रन्थ साहिब जी में भक्त पर भगवान की सहज और सतत कृपा के प्रमाण पग-पग पर वर्णित हैं। चाहे कौरवों की सभा में द्रौपदी की लाज भगवान ने रखी हो या ध्रुव और प्रह्लाद के कष्टों का निवारण किया हो या दुर्योधन के महल को छोड़कर विदुर की कुटिया में भगवान विराजे हों या गज की पुकार पर ग्रह से उसका क्षण भर में उद्धार किया हो या सुदामा से मित्रता निभाई हो—इन सभी कथाओं की भगवान के चरणों में भक्ति दृढ़ करने के लिए बार-बार चर्चा आती है। भक्त प्रह्लाद की कथा ४ बार विस्तार से आई है। साथ ही गुरु ग्रन्थ साहिब जी में पाखण्ड का खण्डन तथा शास्त्र-विरोधी मार्गों की निन्दा भी बड़े ही कड़े शब्दों में बार-बार की गई है। जिस काल में गुरुग्रन्थ साहिब जी की रचना हुई उस समय के विदेशी एवं विधर्मी शासकों द्वारा पीड़ित एवं दलित जनता की करुण पुकार तथा दुष्ट शासकों को फटकार भी गुरु ग्रन्थ साहिब जी में निर्भय रूप से आती है। अपने छोटे से दायरे में सीमित धर्मान्ध लोगों को एक सार्वभौम धर्म को अपनाने की प्रेरणा भी गुरु ग्रन्थ साहिब जी ने बार-बार दी है। संसार की नश्वरता के प्रति उदासीन एवं अनासक्त रहकर किन्तु अपने कर्त्तव्य कर्मों को भलीभाँति करते हुए भगवन्नाम का सदैव स्मरण करने का आदेश गुरु ग्रन्थ साहिब जी ने कदम-कदम पर दिया है।

किस प्रकार नानकदेव जी की वाणी में वेद-शास्त्रों के गूढ़ रहस्य सहज भाव से उतरे है और इन गूढ़ रहस्यों को और भी सरलता से समझाने के लिए किस प्रकार पुराणों की गाथाएँ ग्रन्थ साहिब जी में वर्णित हैं, उसकी कुछ झांकियाँ हम आगे के लेखों में प्रस्तुत करेंगे। यह गुरु ग्रन्थ साहिब जी की ही महिमा है कि करोड़ों अनपढ़ मनुष्य, विशेषकर पश्चिमी भारत की जनता, शास्त्रों के इस पुरातन ज्ञान के अमृत का पान कर सकी। यह गुरुओं की ही महान तपस्या का फल है कि बोल-चाल की भाषा में यह गूढ़ ज्ञान इस सरल रूप में जनता को प्राप्त हो सका। इन लेखों को पढ़ने के बाद ही पाठक इस बात को समझ सकेंगे कि पश्चिमी भारत में, विशेषकर पंजाब में, प्रत्येक हिन्दू परिवार इस बात में क्यों गौरव का अनुभव करता आया है कि उसका एक सदस्य अवश्य सिक्ख बने।

२

अद्वैतवाद अर्थात् एक ही ब्रह्म की सत्ता

यह बात तो सभी धर्म मानते हैं कि ईश्वर एक है। परन्तु यह हमारे वैदिक धर्म की विशेषता है, ऋषियों-मुनियों के पुरातन धर्म की अद्भुत देन हैं कि ईश्वर के अतिरिक्त और किसी तत्त्व की सत्ता ही नहीं है। यह तो सभी धर्म मानते हैं कि सृष्टि की रचना ईश्वर ने की है। परन्तु यह हमारे ऋषियों-मुनियों की ही देन है कि वह ईश्वर स्वयं ही इस सृष्टि के रूप में सजा हुआ केवल अपनी लीला कर रहा है।

हमारे धर्म ने परमात्मा से भिन्न किसी भी तत्त्व की किंचित मात्र सत्ता स्वीकार नहीं की है। परमात्मा से भिन्न यदि एक परमाणु भी है तो उस से परमात्मा सीमित हो जाता है। जो तत्त्व सीमित है वह नाशवान है, और नाशवान तत्त्व परमात्मा नहीं हो सकता। इसलिए जो पारब्रह्म परमात्मा में भी भेद देखता है वह बारम्बार जन्म-मृत्यु के चक्र में घूमता रहता है।

ऋषियों-मुनियों तथा संतों ने परमात्मा में सृष्टि को ऐसे ही अभिन्न देखा है जैसे एक महासागर में लहर अथवा फेन अथवा बुदबुदे अथवा बरफ। यह बरफ, यह लहर, यह फेन, ये बुदबुदे तत्त्व रूप में तो जल ही हैं। लहर, बरफ, फेन आदि जल के विभिन्न नाम ही हैं। महाकाश एक होते हुए भी घड़े के अन्दर उस के आकार के रूप में है और विभिन्न आकार के कमरों में उन के अनुरूप बँटा हुआ सा प्रतीत होता है। किन्तु जब घड़ा फूट जाता है या कमरे टूट जाते हैं तो यह नाम-मात्र के भेद भी समाप्त हो जाते है, और यह घटाकाश आदि महाकाश में एकात्मता को प्राप्त हो जाते हैं। कुछ-कुछ इसी प्रकार पारब्रह्म परमात्मा की सत्ता है। सोने के बने हुए आभूषण हजारों नामों और रूपों में माने जाते हैं किन्तु सत्य तो उनमें केवल सोना ही है। उसी प्रकार एक परमात्मा की सत्ता ही सभी रूपों में अपना खेल खेल रही है। यह सारा विश्व उस एक पारब्रह्म परमात्मा की त्रिगुणमयी माया के आश्रित होकर ही सारा व्यवहार का रहा है। जब मनुष्य उस मायापति परमात्मा की शरण में चला जाता है तब उसकी कृपा से उसका ज्ञान प्राप्त कर वह माया के बंधन से छूट जाता है और स्वयं परमात्मा में उसी प्रकार लीन हो जाता है जिस

प्रकार जल की बूंदे सागर में। अद्वैतवाद का उपरोक्त संक्षिप्त वर्णन ग्रंथ साहिब जी की मानो आधारशिला है। सारे ग्रंथ साहिब जी में बारम्बार इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया गया है।

जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत।
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत॥ (पृ० १४२७)
जिउ जल ऊपरि फेन बुदबुदा तैसा इहु संसारा॥ (पृ० १२५८)
एक क्रिसनं त सरबदेवा देव देवा त आतमह।
आतमं स्रीबास्व देवस्य जे कोई जानसि भेव।
नानक ताको दासु है सोई निरंजन देव॥ (पृ० १३५३)

जिन पाठकों ने गीता पढ़ी है वे पायेंगे कि किस प्रकार यह वाणी गीता के सातवें अध्याय के १२ वें श्लोक में निहित सिद्धांत, कि ज्ञानी की दृष्टि में यह सारा जगत वासुदेवमय हो जाता है, कितने सुन्दर रूप में नानक जी वाणी में उतरा है। यह सिद्धांत कि सारा जगत परमात्मामय ही है और परमात्मा स्वयं ही जगत रूप में लीला कर रहा है, ग्रंथ साहिब जी की वाणी में कितना मुखरित हो उठता है।

आपनि आपु आपहि उपाइओ। आपहि बाप आपही माइओ॥
आपहि सूखम आपहि असथूला। लखी न जाई नानक लीला॥ (पृ० २५०)
आदि पुरखु आपे स्रसटि साजे···(पृ० ८४२)
आदि पुरख करतार करण कारण सभ आपे॥ (पृ० १३८५)
तुझ बिनु दूजा अउरु न कोई सभु तेरा खेलु अखाड़ा जिउ॥ (पृ० १०३)
जलतरंगु जिउ जलहि समाइआ। तिउ जोती संगि जोति मिलाइआ।
···तूं जलनिधि तूं फेन बुदबुदा॥ (पृ० १०२)
तूं आपे सोहहि आपे जग मोहहि आपे करे कराऐ।
आपे थापि उथापे आपे मारे आपि जीवाऐ॥ (पृ० १२५)
पसरिओ आपि होइ अनत तरंग। लखे न जाहि पारब्रहम के रंग॥ (पृ० २७५)
करण कारण प्रभु एकु है दुसर नाही कोइ।
नानक तिसु बलिहारणै जलि थलि महीअलि सोइ॥ (पृ० २७६)
जीअ जंत के ठाकुरा आपे वरतणहार।
नानक एको पसरिया दूजा कह द्रिसटार॥ (पृ० २९२)

जिस प्रकार जल की लहर, फेन और बुदबुदा जल से भिन्न नहीं होते उसी प्रकार नानक जी के शब्दों में यह सारा माया का प्रपंच, यह सारा संसार पारब्रह्म की ही लीला है। यह भाव कितने सुन्दर रूप से इस वाणी में उतरा है:

जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जलते भिन न होई।

इहु परपंचु पारब्रहम की लीला बिचरत आन न होई ॥ (पृ० ४८५)
तुधु आपे स्रिसटी सभ उपाई जीअ जंत सभि तेरा खेलु ॥ (पृ० ११)
खंड ब्रहमंड का एको ठाणा गुरि परदा खोलि दिखाइओ ।
एकै कनिक अनिक भाति साजी बहु परकार रचाइयो ॥ (पृ० २०५)
वासुदेव जल थल महि रविआ । गुर परसाद बिरलै ही गविआ ॥ (पृ० २५६)
सहस घटा महि एकु आकासु । घट फुटे ते ओही प्रगासु ॥ (पृ० ७३६)
सूरज किरण मिले जल का जलु हूआ राम । (पृ० ८४६)
नानक जलु जलहि समाइआ जोती जोति मीके राम । (पृ० ८४८)
इह परपंचु किया प्रभु स्वामी सब जग जीवण जुगणे ।
जीव सललै सलल उठै बहु लहरी मिलि सललै सलल समाणे ॥ (पृ०६२७)
जिउ जल तरंग उठहि बहु भांतिफिरी सललै सलल समाइदा ॥ (पृ० १०७६)
जल बिचहूं बिंबु उठालिओ जल माहि समाईआ ॥ (पृ० १०६६)
जिउ जल तरंग फेन जल होइहै सेवक ठाकुर भए एका ॥ (पृ० १२०६)

ऊपर दी गयी ग्रंथ साहिब जी की वाणी से वेदान्त का यह सिद्धांत कि ईश्वर एक ही है और ईश्वर के अतिरिक्त और किसी तत्त्व की कोई सत्ता ही नहीं है, कितने सहज रूप से जल एवं आकाश के उदाहरणों में हमारे सामने उतरता है। वह एक परमात्मा स्वयं अपने को सृष्टि के रूप में, इन अनेक ब्रह्माण्डों के रूप में, लीला के लिए प्रकट करता है और फिर अपनी इच्छानुसार अपने में समेट भी लेता है। यह प्रवृत्ति और निवृत्ति की अकथ कहानी केवल परमात्मा ही जान सकता है, अन्य कोई नहीं।

शास्त्रों के इस सिद्धांत को भी नानक जी ने बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है कि यह संसार एक वटवृक्ष है जिसका मूल ऊपर है। परमात्मा से इसका जन्म हुआ है और इसकी शाखाओं में पत्तों की तरह लगे हुए वेदमन्त्र नाना प्रकार के कर्मों का विस्तार करते हैं। इस संसार रूपी-वृक्ष के उत्पत्ति-स्थान परमात्मा को पहचानने के बाद ही इस वृक्ष को काटा जा सकता है:

उरध मूल जिसु साख तलाहा चारि बेद जितु लागे ।
सहज भाइ जाइ ते नानक पारब्रहम लिव जागे ॥ (पृ० ५०३)
आपे वेद पुराण सभि सासत आपि कथै आपि भीजै ।
आपे हि बहि पूजे करता आपहि परपंचु करीजै ।
आपि परविरति आपि निरविरती आपे अकथु कथीजै ॥ (पृ० ५५१)
आपे सिव संकर महेसा आपे गुरमुखि अकथ कहाणी ।
आपे जोगी आपे भोगी आपे संनिआसी फिरै बिबाणी ॥ (पृ० ५५३)
आपे अठसठि तीरथ करता आपि करे इसनानु ।

आपे संजमि बरतै सुआमी आपि जपाइहि नामु ।। (पृ० ५५४)
एक रूप सगलो पासारा । ···ऐसो गिआनु बिरलोई पाए ।।
···अनिक रंग निरगुन एक रंगा । आपे जलु आपही तरंगा ।।
आपि करावन दोसु न लैना । आपन वचनु आपहि करना ।। (पृ० ८०३)
एकंकारु एकु पसारा एकै अपर अपारा ।। (पृ० ८२२)

इस प्रकार ग्रंथ साहिब जी की मान्यता के अनुसार जो भी व्यक्ति एक पारब्रह्म परमात्मा को ही सब में और सबको परमात्मा में ही देखता है, वह कभी माया के भ्रम में नही पड़ सकता । ग्रंथ साहिब जी कहते है :

ब्रहम महि जनु जन महि पारब्रहमु ।
एकहि आपि नही कछु भरमु ।। (पृ० २८७)

जब नानक जी के शब्दों में 'सभ एक निरंजन निरंकार प्रभ सभु किछु आपहि करता" (पृ० २१६) है तो सभी के आत्मरूप में स्थित ऐसे परमात्मा को किस उपाय से प्राप्त किया जाय । वेदों का गूढ़ रहस्य है "नेत नेत कथंति बेदा ऊंच मूच अपार गोविंदह" (पृ० १३५६) अर्थात उस परमात्मा को किसी परिभाषा मे बाँधा नहीं जा सकता । उसे किस उपाय से प्राप्त करें, इसका सहज भेद भी ग्रंथ साहिब जी बतलाते हैं । उस परमात्मा को तो अपने ही स्वरूप में चिंतन करने से जाना जा सकता है । सोहं मन्त्र अर्थात वह परमात्मा ही आत्मरूप में मुझ में विद्यमान है—इस महावाक्य का निरंतर जप और स्मरण करने से वह अगम, अगोचर, अकाल पुरुष, परमात्मा सहज ही सुलभ हो जाता है । ग्रंथ साहिब जी कहते हैं :

ततु निरंजन जोती सबाई सोहम भेदु न कोई जीउ ।। (पृ० ६०३)
सोहं आपु पछाणीऐ सबदि भेदि पतीआइ ।। (पृ० ६०)
सोहं हंसा जपु जापहु त्रिभवण तिसै समाहि ।। (पृ० १०९३)
सोहम सो जाकउ है जाप ।
जा कउ लिपत न होइ पुंन अरु पाप ।। (पृ० ११६२)

इसी भाव को दर्शाते हुए कि उस पारब्रहम परमात्मा के दर्शन अपने हृदय में करने हैं, ग्रंथ साहिब जी कहते हैं :

अगम अगोचर रूपु न रेखिआ ।
खोजत खोजत घटिघटि देखिआ ।। (पृ० ८३८)
अचरज कथा महा अनूप ।
आतमा पारब्रहम का रूपु ।। (पृ० ८६८)
अंतरि पूजा मन ते होई ।
एकी बैखे अउर न कोइ ।।

दूजै लोकी बहुतु दुखु पाइआ।
सतिगुरि मैनो एकु दिखाइआ ।। (पृ० ११७३)

और जितना यह ब्रह्माण्ड है बस उतना ही सब पिण्ड है। इस ज्ञान को और दृढ़ कराते हुए नानक जी कहते हैं :

काइआ अंदरि सभु किछु बसै खंड मंडलु पाताला।
काया अंदरि ब्रहमा बिसनु महेसा सब ओपति जितु संसारा।
सचै आपणा खेलु रचाइआ आवागउणु पासारा ।। (पृ० ७५४)

इस प्रकार जहाँ एक ओर यह पारब्रह्म परमात्मा प्राणीमात्र के घट-घट में व्यापा हुआ है, "सभ घट आपे भोगणहारा" (पृ० ११३), वहाँ वह विराट पुरुष के रूप में सारे विश्व पर भी छाया हुआ है: "सहस तव नैन···सहस मूरति··· सहस पद बिमल···"। (पृ० १३)

जिस प्रकार वेदों में उसी प्रकार ग्रन्थ साहिब जी में भी सहस शब्द का प्रयोग परमात्मा की अनन्तता दिखाने के लिए हुआ है। इस प्रकार उस अदभुत पारब्रह्म तत्त्व को, गुरु ग्रन्थ साहिब जी के शब्दों में, उसी का गुणगान करने से, उसी की कृपा से जाना जा सकता है, प्राप्त किया जा सकता है। नहीं तो "काठ कि पुतरी कहा करे बपुरी खिलावन हारो जानै" (पृ० २०६)। भला कोई काठ की पुतली कैसे अपने नचाने वाले को जान सकती है? उस सब के ठाकुर, सब के स्वामी का गुणगान करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

थानि थंतरि तूं है तूं है इको इकु वरतावणिआ। (पृ० १३१)
माइआ अगनि न पोहै तिन कउ रंगि रते गुण गावणिआ।
तूं मेरा मीतु साजनु मेरा सुआमी तुधु बिन अवरु न जानणिआ ।।
(पृ० १३२)

ग्रन्थ साहिब जी के शब्दों में उस पारब्रह्म परमात्मा को प्राप्त करने के लिए उसी की कृपा से, उसकी त्रिगुणमयी माया को पार करके, आत्मा को उसमें एक करना ही मानवमात्र का कर्तव्य है ताकि जन्म-मृत्यु के चक्र में मनुष्य फिर न फँसे। ग्रन्थ साहिब जी ने साधना की इस स्थिति को ही तुरिया अवस्था कहा है, जहाँ सब प्रकार के वेद-शास्त्र समाप्त हो जाते हैं, जहाँ न कोई कर्म रह जाता है और न ही कर्मों के भोग। क्योंकि उस अवस्था में शरीर के प्रति अहंता मिट जाती है और जीव आनन्द के मूल पारब्रह्म पुरुषोत्तम के साथ एकीभाव को प्राप्त हो जाता है। ऐसे ब्रह्मज्ञानी एवं भक्त के साथ साक्षात् परमात्मा रहता है, और ऐसा ज्ञानी भक्त न तो कोई भय मानता हैं न किसी को भयभीत करता है। नानक जी के शब्दों में इस प्रकार नारायण को जानते वाला प्राणी करोड़ों में एक होता है।

निस दिन माइआ कारने प्रानी डोलत नीत ।
कोटन मैं नानक कोऊ नाराइन जिह चीति ॥
भै काहूं को देत नहि नहि भय मानत आनि ।
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥ (पृ० १४२७)
आतमा देउ पूजीऐ आतमे नो आतमे दी प्रतीति होइ···॥ (पृ० ८७)
नाना रूप सदा हहि तेरे तुझही माहि समाही ।
नानक ततु तत सिउ मिलिआ पुनरपि जनमि न आही ॥ (पृ० १६२)
जिनी आतमु चीनिआ परमातमु सोई ॥ (पृ० ४२१)

ग्रंथ साहिब जी की यह स्थापना इस सिद्धांत का प्रतिपादन है कि जिसने आत्मा को पहचान लिया वह परमात्मा में एकाकार होकर परमात्मा ही हो गया। यही भाव ग्रंथ साहिब जी बार-बार व्यक्त करते हैं :

आतमा परातमा एको करै ।
अंतर की दुबिधा अंतरि मरै ॥ (पृ० ६६१)
आदि पूरन मधि पूरन अंति पूरन परमेसुरह ।
सिमरंति संत सरबत्र रमणं नानक अघ नासन जगदीसुरह ॥ (पृ० ७०५)
नानक प्रभु पाइआ सबदि मिलाइआ जीती जोति मिलाई ॥ (पृ० ७७५)

इस प्रकार परमात्मा के सतत ध्यान में रहने वाले भक्त के साथ स्वयं प्रभु गोष्ठी करते हैं। इसी भाव को दिखाते हुए ग्रंथ साहिब जी कहते हैं :

भगत संगि प्रभु गोसटि करत ।
महिमा न जानहि बेद ॥
ब्रहमे नहीं जानहि भेद···
देवीआ नहि जानै मरम । सभ उपरि अलख पारब्रहम ॥ (पृ० ८९४)

ग्रंथ साहिब जी कहते हैं कि ब्रह्मज्ञान की ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिए अपने अहं से उठ कर तुरिया अवस्था को प्राप्त करना होगा तथा वेद-शास्त्रों के भी बंधन से परे जाना होगा :

इह जुग महि को विरला ब्रहमगिआनी जि हउमै मेटि समाए। (पृ० ५१२)
अनहद बाणी पाइऐ तह हउमै होइ बिनासु ॥ (पृ० २१)
तूरीआवसथा गुरमुखि पाइऐ । (पृ० ३५६)
चउथे पद कउ जो नरु चीन्है तिन्हही परम पदु पाइआ । (पृ० ११२३)

ऐसे परमपद को प्राप्त कर लेने पर आनन्द के अतिरिक्त कुछ नहीं रह जाता : "अनद मूलु धिआइओ पुरखोतमु अनदिनु अनद अनंदे ॥ (पृ० ८००)

३

निर्गुण-सगुण

ब्रह्मतत्त्व और अद्वैतवाद के बारे में गुरु ग्रन्थ साहिब जी ने जो कुछ कहा है उसकी कुछ झाँकी हमने अपने पिछले लेखों में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। जैसा कि हमने बतलाने का प्रयत्न किया, ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार पारब्रह्म परमात्मा न केवल एक ही है बल्कि दूसरे किसी तत्त्व की सत्ता ही नहीं है। और वह परमात्मा स्वयं ही जगत रूप में पसरा हुआ केवल लीला मात्र ही कर रहा है। यदि कोई व्यक्ति कहे कि वह परमात्मा केवल निर्गुण या निराकार ही है या फिर वह केवल सगुण या साकार ही है तो ये दोनों ही विपरीत बातें हैं। "नेति नेति" के सिद्धांत के अनुसार ये बातें परमात्मा के स्वरूप का ठीक वर्णन नहीं करतीं। वह पूर्ण पुरुष विधाता जब अकेला अपना ही खेल खेल रहा है तो उसे किसी एक परिभाषा या सीमा में बांधना ग़लत होगा।

वेद कहते हैं कि जो केवल व्यक्त या साकार की उपासना करते हैं वे मानो घोर अंधकार में प्रवेश करते हैं और जो केवल अव्यक्त या निराकार की उपासना में रत हैं वे मानो उससे भी अधिक अंधकार में प्रवेश करते हैं। दोनों की अलग-अलग उपासनाओं के फल अलग-अलग और सीमित होते हैं। किन्तु जब मनुष्य को यह ज्ञान हो जाता है कि सगुण और निर्गुण दोनों ही पारब्रह्म परमात्मा के स्वरूप हैं तो वह परमपद को प्राप्त हो जाता है। ग्रंथ साहिब जी ने इस गूढ़ रहस्य को बड़े ही सरल शब्दों में समझाया है :

निरगुण सरगुण आपे सोई। ततु पछाणै सो पंडित होई॥ (पृ० १२८)
तू निरगुन तूं सरगुनी॥ (पृ० २११)
आप ही गुपत आपि परगटना॥ (पृ० ८०३)

निर्गुण-सगुण के बारे में दूध का दूध और पानी का पानी वाली कहावत को चरितार्थ करते हुए ग्रन्थ साहिब जी की नीचे दी हुई वाणी रहस्य की इस गुत्थी को किस सुन्दरता एवं सहजता से सुलझा देती है :

निरंकार आकार आपि निरगुन सरगुन एक।
एकहि एक बखाननो नानक एक अनेक॥

भींन-भींन त्रैगुण बिसथार। निरगुन ते सरगुन द्रिसटारं॥ (पृ० २५०)
इधै निरगुन उधै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा॥ (पृ० ८२७)
निरंकार महि आकारु समावै॥ (पृ० ४१४)
सरगुन निरगुन निरंकार। (पृ० २९०)

निर्गुण और सगुण का भेद किस प्रकार पममात्मा में जाकर समाप्त हो जाता है इस रहस्य का उद्घाटन ग्रन्थ साहिबा जी में इस प्रकार होता है :

घट घट अंतरि आपे सोई॥
आपे सूरु किरणि बिसथारु। सोई गुपतु सोई आकारु॥
सरगुण निरगुण थापै नाउ। दुहि मिलि एकै कीनो ठाउ॥ (पृ० ३८७)
निरंकारु आकारु है आपे आपे भरम भुलाए॥
करि करि करता आपे वेखै जितु भावै तितु लाए॥ (पृ० १२५७)

परमात्मा का निर्गुण-सगुण भाव कितना रसमय होकर नीचे दी वाणी में उतरा है :

निरगुन हरीआ सरगुन धरीआ।
अनिक कोठरीआ॥ भिन भिन भिन भिन करीआ॥
रासि मंडलु कीनो आखारा। सगलो साजि रखिओ पासारा॥
बहु बिधि रूप रंग आपारा। सभि रस लैत बसत निरारा॥
बरनु चिहनु नाही मुखु न मासारा॥ कहनु न जाई खेलु तुहारा॥
नानक रेण संत चरनारा॥ (पृ० ७४६)

ऊपर दी वाणी में कितना सुन्दर वर्णन है कि किस प्रकार वह परमात्मा निर्गुण और सगुण सभी रूपों में रस लेता हुआ सबसे न्यारा ही विराजमान है। यहीं भाव आगे भी आता है :

सभु करता सभु भुगता···। ओपति करता परलउ करता॥
निरगुन करता सरगुन करता। गुरप्रसादि नानक समद्रिसटा॥ (पृ० ८६२)

यह सारा जगत-व्यापार ग्रन्थ साहिब जी के शब्दों में उस पारब्रह्म परमात्मा का ही खेल या लीला है। चाहे वह जन्म-मरण हो, उत्पत्ति और प्रलय हो या फिर सुख और दुःख हो। ग्रंथ साहिब जी कहते हैं :

तुझ बिनु दूजा अवरु न कोई सभु तेरा खेलु अखाड़ा जीउ॥ (पृ० १०३
अविनासी प्रभि खेलु रचाइआ गुरमुखि सोजि होई।
नानक सभि जुग आपे वरतै दूजा अवरु न कोई॥ (पृ० ९४६)
सभु किछु तेरा खेलु है सचु सिरजण हारा॥ (पृ० ९४८)
सभु किछु हरि का खेलु है गुरमुखि किसै बुझाई॥ (पृ० ९५३)
आपे खेल करै सभि करता ऐसा बूझै कोई॥ (पृ० ९९३)

निरंकारि आकारु उपाइआ ।
आपे खेल करै सबि करता । (पृ० १०६५)
आपे आप निरंजना जिनी आपि उपाइआ ।
आपे आप खेलु रचाइ ओणु सभु जगतु समाइआ ।।
त्रैगुण आपि सिरजिअनु माइआ मोह बधाइया ।। (पृ० १२५७)
हरि सरु सागरु हरि है आपे इहु जगु है सभु खेलु खेलईआ ।
जिउ जल तरंग जलु जलहि समावहि नानक आपे आपि रमईआ ।।
(पृ० ८३५)

ग्रन्थ साहिबा जी में अद्वैतवाद का प्रतिपादन इतना प्रबल रूप में है कि भक्त जब भगवान की उपासना स्वामी भाव से कर रहा है तब भी परमात्मा में समुद्र की तरंग की तरह विलीन होने की चाह बार-बार कसक उठती है :

जिउ जल तरंग फेनु जल होईहै सेवक ठाकुर भए एका ।। (पृ० १२०६)

भाटों ने भी जहाँ ग्रन्थ साहिब जी के अन्तिम भाग में गुरुओं की महिमा गाई है वहां भी यह निराकार-साकार भाव उपमा के रूप में परमात्मा के साथ एकत्व प्राप्ति के लिए किस सुन्दर ढंग से प्रदर्शित हुआ है :

आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ ।
निरंकारु आकारु जोति जग मंडलि करियउ ।। (पृ० १३९५)

इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्रन्थ साहिबजी ने निर्गुण-सगुण के गूढ़ आध्यात्मिक रहस्य को कितना सरल रूप में मानव मात्र के सामने रखा है। इस संबंध में तुलसीदास जी की यह चौपाई बरबस याद आती है : "अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा । कथा अगाध अनादि अनूपा ।।"

४

ब्रह्म-पारब्रह्म

वेदों के अनुसार, इस संसार की रचना, पालन एवं संहार करने में जो समर्थ है, उसे ब्रह्म कहते हैं। आदि शंकराचार्य जी ने छः दर्शन-शास्त्रों में प्रमुख ब्रह्मदर्शन पर अपने भाष्य में ब्रह्म की यही परिभाषा की है। व्यासजी रचित इस दर्शन-शास्त्र का पहला सूत्र ही यह है कि आओ ब्रह्म की जिज्ञासा करें। अर्थात् ब्रह्म की प्राप्ति ही एकमात्र लक्ष्य होना चाहिए।

ब्रह्म की संक्षेप में दूसरी परिभाषा यह भी है कि जो तत्त्व त्रिकाल-बाधित नहीं है, वह ब्रह्म है। यानी ब्रह्म सब कालों में या सब देशों में सदैव विद्यमान है। सब कुछ का अभाव हो सकता है किन्तु ब्रह्म का नहीं। हम दिल्ली में हैं तो दिल्ली के बाहर नहीं हैं। बुढ़ापे में जवानी या बचपन का अभाव है। रात में दिन का अभाव है। भविष्य में भूत और वर्तमान का अभाव है। किन्तु ब्रह्म के विषय में ऐसा नहीं हैं।

ब्रह्म को एक और परिभाषा द्वारा समझाने का प्रयत्न ऋषियों ने किया है। वह यह है कि वह सच्चिदानन्द है यानी वह सत्य है, चैतन्य है और आनन्द-स्वरूप है। यही कारण है कि सृष्टि का कभी अभाव नहीं होता। सारी सृष्टि चैतन्यमय है और मनुष्य आनन्द की प्राप्ति के लिए हमेशा प्रयत्न करता रहता है। ग्रन्थ साहिब जी की पहली पंक्ति ही है "आदि सचु जगादि सचु। है भी सचु नानक होसी भी सचु॥"

ब्रह्म के स्वरूप को और भी स्पष्ट करने के लिए दो और विशेषण जोड़े जाते है। ब्रह्म पूर्ण है और वह आत्मा है। यानि ब्रह्मतत्त्व पूर्ण रूप में ही हर स्थान पर हर वस्तु में विद्यमान है। इस में यही उदाहरण काफी होगा कि अनाज के एक बीज में इतनी शक्ति है कि वह दाना अनन्त संख्या में बंट जाता है और इन बढ़े हुए असंख्य दानों में से प्रत्येक दाना अपने में अनन्त होने की उतनी ही पूर्ण शक्ति रखता है। और यदि किसी को यह संशय हो कि वह ब्रह्मतत्त्व हमसे अलग है तो शास्त्रों का यह बारम्बार स्पष्ट निर्देश है कि वह ब्रह्म घट-घट में, प्राणी-प्राणी में उसकी आत्मा के रूप में विद्यमान है। आइये अब देखें कि गुरु ग्रन्थ साहिब जी किस स्पष्ट एवं सरल

भाषा में ब्रह्मतत्त्व हमें सभझाते हैं। सच पूछिए तो ब्रह्म और पारब्रह्म शब्द गुरु ग्रंथ साहिब जी में इस प्रकार पिरोया हुआ है जिस प्रकार माला में धागा।

ग्रंथ साहिब जी कहते हैं कि यह पारब्रह्म ही सब जगह पसरा हुआ है। इसा ने ही केवल लीला करने के लिए सब जगह अपना विस्तार कर रखा है।

पेखु नानक पसरे पारब्रहम ॥ (पृ० १९६)
ब्रहमो पसारा ब्रहमु पसरिआ सभु ब्रहमु द्रिसटी आइआ ॥ (पृ०७८२)
सभु ब्रहम पसारु पसारियो आपे खेलंता ॥ (पृ० १०९५)
एक जोति एको मनि ॥
बसिआ सभ ब्रहम द्रिसटी इकु कीजै ।
आतमरामु सभ एकै है पसरे सभ चरन तले सिरु दीजै ॥ (पृ० १३२५)
तम संसारु चरन लगि तरिऐ सभ नानक ब्रहम पसारो ॥ (पृ०१४२९)
पारब्रहम अपरंपर देवा ।
अगम अगोचर अलख अभेवा ॥ (पृ० ९८)
घट घट अतरि पारब्रहमु नमसकारिया ॥ (पृ० १०८)
घटि घटि पारब्रहमु तिनि जनि डीठा ॥ (पृ० १३१)

पारब्रह्म के भाव को और भी स्पष्ट करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते है :

अगम अगोचरु अपर अपारा पारब्रहमु परधानो ।
आद जुगादी है भी होसी अवरु झूठो सभु मानो ॥ (पृ० ४३७)

यह वाणी बहुत ही गूढ़ है। इसमें नानक जी ने शास्त्रों में वर्णित अपर ब्रह्म यानी जिसके अन्तर्गत सारे ब्रह्माण्डों की रचना होती रहती है और पर ब्रह्म यानी सृष्टि के परे का स्वरूप, दोनों का एक साथ वर्णन किया है।

ऐसे पारब्रह्म की महिमा ब्रह्म के अलावा और कौन जान सकता है? इसी भाव को समझाते हुए गुरु ग्रन्थ साहिब जी कहते है :

तव गुन ब्रहम ब्रहम तू जानहि जन नानक सरनि परीजै ॥ (पृ० १३२५)
मिलि ब्रहमु जोति ओति पोति उदकु उदकि समाइआ ।
जलि थलि मही अली एकु रविआ न दूजा द्रिसटाइआ ॥
घटिघटि अंतरि ब्रहमु लुकाइआ ॥ (पृ० १३५१)
पारब्रहम पूरन परमेसुर । (पृ० २०९)
घट घट पूरन ब्रहम प्रकास···
घट घट अंतरि ब्रहम समाहू । (पृ० २५९)

जैसा कि वेद-शास्त्रों में आता है, ये अनन्त सृष्टियाँ, ये समस्त ब्रह्माण्ड, उस

ब्रह्म के एक पाद में ही स्थित हैं। गीता के दसवें अध्याय में भगवान ने अपनी विभूतियां गिनाते समय अर्जुन से कहा है कि तुम विस्तार से जानकर क्या करोगे, बस इतना ही समझ लो कि मेरे एक अंश से ही सारा संसार व्याप्त है। इसी भाव को ग्रंथ साहिब जी ने बड़े ही मार्मिक रूप में १२३३ एवं १२३६ पृष्ठ पर विस्तार से वर्णन किया है। उनके कुछ थोड़े से अंश हम नीचे दे रहे हैं :

अनिक ब्रहम जाके बेद धुनि करहि। अनिक महेस बैसि धिआनु धरहि॥
अनिक पुरख अंसा अवतार। अनिक इंद्र ठाढे दरबार॥
अनिक सूर ससीअर नखिआति।...अनिक अकास अनिक पाताल॥
अनिक सासत्र सिम्रिति पुरान।...अनिक सेख नवतन नामु लेहि॥
पारब्रहम का अंतु न तेहि...
जिनि जपिआ नानक ते भए निहाल॥

ग्रंथ साहिब जी कहते हैं कि उस पारब्रह्म परमात्मा की आश्चर्य-जनक महिमा को देखो और समझो जहां अनेकों ब्रह्मा वेदध्वनि कर रहे हैं, अनेकों महेश तथा विष्णु ध्यान धर रहे हैं, भगवान के अनेकों अंशावतार व इंद्र दरबार में खड़े हैं, अनेकों सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र वहां भरे हुए हैं, अनेक शास्त्र, स्मृति तथा पुराण भगवान के गुणों का बखान कर रहे हैं और अनेकों शेषनाग उनका निरन्तर नाम लेते हुए अन्त नहीं पा रहे हैं। ऐसे ही पारब्रह्म को जप कर नानक धन्य हो गए।

वेदों का कहना है कि जो ब्रह्म को जान लेता है वह ब्रह्म ही हो जाता है, उस परम तत्त्व पर दृष्टि पड़ते ही जीव के हृदय की गांठ खुल जाती हैं, सभी संशय नष्ट हो जाते है और समस्त शुभाशुभ कर्म क्षीण हो जाते हैं। इस प्रकार पारब्रह्म को जानने वाला ब्रह्मज्ञानी जीवनमुक्ति की आनन्दमयी अवस्था में प्रवेश कर जाता है।

प्रश्न उठता है कि इस ब्रह्म को कैसे जानें ? क्योंकि ब्रह्म मन और इन्द्रियों की पहुँच के परे है। इसकी प्राप्ति का मार्ग दुर्गम है और छुरे की धार से भी तीक्ष्ण एवं दुष्कर है। चूंकि ब्रह्म में सभी विपरीत बातों की स्थिति रहती है, उसे समझने में कुशाग्र बुद्धि भी समर्थ नहीं होती। जैसा कि ब्रह्म के बारे में वेद कहते हैं, वह अणु से अणु और महान से भी महान है, वह सूक्ष्म भी है और स्थूल भी है, वह चलता भी है और नहीं भी चलता है, वह भीतर भी है और बाहर भी, वह जन्मदाता भी है और मृत्यु भी, इंद्रियों के गुणों का प्रकाशक भी है किन्तु इन्द्रियाँ उसे ग्रहण नहीं कर सकतीं, आदि। इस रहस्य को अत्यन्त संक्षेप में महर्षि याज्ञवल्क्य ने अपनी पत्नी ब्रह्मवादिनी मैत्रेयी को इस प्रश्नात्मक उपदेश के द्वारा समझाया था: "अरि मैत्रेयी ! विज्ञाता को किस के द्वारा जानें ? यानी जिसके द्वारा

सब कुछ जाना जाता है उसको किसके द्वारा जानें ?"

किन्तु वेदों में ही इसकी प्राप्ति का सरलतम उपाय भी बताया गया है। वह यह कि जो उसको चाहता है, उसको भजता है, उसकी प्राप्ति की कामना करता है, उसे वह पारब्रह्म स्वयं ही अपनी कृपा द्वारा ज्ञान प्रदान करता है और उसे अपना लेता है। गीता के दसवें अध्याय के श्लोक ९, १० और ११ में इस बात की भगवान ने बड़ी स्पष्ट घोषणा की है कि हे अर्जुन ! जो भक्त मुझ में प्राण और मन लगाते हुए मुझे भजते हैं उनके हृदय में बैठकर मैं स्वयं ज्ञान का दीपक जलाता हूं तथा उनके अज्ञान के अंधकार को नष्ट करता हूं। १२वें अध्याय में भगवान ने पुनः प्रतिज्ञा की है कि जो मुझ में चित्त लगाते हैं उनका मैं इस मृत्युमय संसार से बेड़ा पार कर देता हूं। जैसा कि गीता के ९वें अध्याय में स्पष्ट किया गया है, देवताओं को भजने वाले देवताओं को प्राप्त करते हैं, भूतों को भजने वाले भूतों को प्राप्त करते हैं। वैसे ही जो भक्त परमात्मा को भजते हैं वे परमात्मा को प्राप्त करते हैं। वेदों का यह भी निर्णय है कि यदि उस ब्रह्म को इस जीवन में ही जान लिया तो कुशल है, नहीं तो जीव भारी भय में पड़ता हुआ अनन्त काल तक लख-चौरासी में भ्रमण करने के लिए मजबूर हो जाता है।

पारब्रह्म के बारे में ग्रन्थ साहिब जी आगे क्या कहते हैं, हम उस ओर दृष्टि-पात करें :

निहफलं तस्य जनमस्य जावद ब्रहम न बिंदते ।। (पृ० १३५३)
सासत सिम्रिति बेद चारि मुखागर बिचरे ।···
रंगु न लगी पारब्रहम ता सरपट नरके जाइ ।···
चिति न आइओ पारब्रहम त सरप को जूनि गइआ ।
···ता जम कंकर वसि परिआ ।। (पृ० ७१)
पारब्रहमु जिसु विसरै तिसु बिरथा सासु ।। (पृ० ३२१)
देवी देवा पूजहि डोलहि पारब्रहमु नहि जाना ।
कहत कबीर अकुलु नहीं चेतिआ बिखिया सिउ लपटाना ।। (पृ० ३३२)
धावत भ्रमत रहनु नहि पावत पारब्रहमकी गति नहीं जानी ।। (पृ०१३८७)

इस प्रकार स्थान-स्थान पर जीवमात्र को पारब्रह्म की प्राप्ति की प्रेरणा देते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहिचलु होवै राजु ।। (पृ० ७०)
ब्रहमु बीचारिआ जनमु सवारिआ पूरन किरपा प्रभि करी ।। (पृ० ८१)
पारब्रहमु आराधीए उधरै सभ परवारु ।। (पृ० २१८)
कालु जालु ब्रहम अगनी जारे ।। (पृ० २२३)
नानक भावै पारब्रहम पाहन नीर तरे···

सरन गही पारब्रहम की मिटिआ आवागमन ।। (पृ० ३००)
बखसिआ पारब्रहम परमेसर सगले रोग विदारे ।। (पृ०६२२)
पतित उधारणा जीअजंत तारणा बेद उचार नहीं अंतु पाइओ । (पृ० ६८३)
पतित पुनीत होहि खिन भीतरि पारब्रहम कै रंगि ।। (पृ० १३०१)
अवलोक्या ब्रहमु भरमु सभु छुटक्या दिव्य द्रिस्टि कारण करणं । (पृ०१४०२)
पतित उधारण पारब्रहमु संम्रथ पुरखु अपारू ।। (पृ० १४२५)

इस प्रकार पारब्रह्म की आराधना का महान फल दर्शाते हुए ग्रंथ साहिब जी प्राणी-प्राणी को उसकी आराधना का उपदेश देते हैं और कहते है कि वह पारब्रह्म सब का ठाकुर है, वही अकेला है और दूसरा कोई नहीं हैं और वही थान-थन-तिरी (स्थान-स्थानेतर) में रम रहा है । उस पारब्रह्म में किसी प्रकार का कोई भेद नहीं है । इसलिए हे जीव ! तू ब्रह्म का निरन्तर भजन और ध्यान कर ।

हे अचुत हे पारब्रहम अबिनासी अघनास ।
हे पूरन हे सरब मै दुखभंजन गुणतास ।। (पृ० २६१)
पारब्रहम मोहि किरपा कीजै । धूरि संतन की नानक दीजै ।। (पृ० १८१)
नानकु जागै पारब्रहम कै रंगि ।। (पृ० १८२)
विनउ सुनहु तुम पारब्रहम दीनदइआल गुपाल ।। (पृ० २५८)
मनस दा धिआइ केवल पारब्रहमु ।। (पृ० २७०)
नानक तिन सदै बलिहारी जिना धिआनु पारब्रहम ।। (पृ०७०६)
भूल चूक अपना बारीकु बखसिआ पारब्रहम भगवाना ।। (पृ० ३८३)
सांसि सांसि न बिसरू कबहू ब्रहम प्रभु समरथ···
जितु दिनि बिसरै पारब्रहमु भाई तितु दिनि मरीऐ झूरि ।। (पृ० ६४०)
आठ पहर पारब्रहमु धिआइऐ ।। (पृ० ७४४)
जपि पारब्रहमु नानक निसतरिए ।। (पृ० ८६६)
नानक बिरही ब्रहम के आन न कतहू जाहि ।। (पृ० १३६४)
चरण भजे पारब्रहम के सभि जप तप तिनही कीति ।। (पृ० ४८)

इस प्रकार जो निरन्तर ब्रह्म के ध्यान में निमग्न हो गया वही ग्रंथ साहिब जी की दृष्टि में सच्चा ब्राह्मण हैं । ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

सो ब्राहमणु ब्रहम जो बिदे हरि सेती रंगि राता ।। (पृ० ६८)
बबा ब्रहमु जानत ते ब्रहमा ।। (पृ० २५८)
कहु कबीर जो ब्रहमु बीचारै । सो ब्राहमणु कहीअतु है हमारै ।। (पृ०३२४)
सो ब्राहमणु जो ब्रहम बीचारै । आपि तरै सगले कुल तारै ।। (पृ०५६३)
सो ब्रहमणु भला आखीये जि बूझै ब्रहमु बीचारु ।। (पृ० १०९३)

किन्तु जैसा कि हमने ऊपर लिखा उस पारब्रह्म की प्राप्ति उसकी ही कृपा से हो सकती है और ऐसी स्थिति में जब वह पारब्रह्म जीव को अपने तत्त्व का ज्ञान देता है तब वह जीव का गुरु-रूप हो जाता है। या फिर स्वाभाविक है कि जिस गुरु ने उस पारब्रह्म का ज्ञान कराया वह सतगुरु भी स्वयं पारब्रह्म-रूप ही है। ग्रंथ साहिब जी कहते हैं :

पारब्रहमु पूरन गुरदेव ॥ (पृ० १९३)
गुर गोबिन्दु पारब्रहम पूरा ॥ (पृ० २०२)
पारब्रहम परमेसर सतिगुर आपे करणैहारा ॥ (पृ० ७४९)
पारब्रहम परमेसर सतिगुर हम बारिक तुम्ह पिता किरपाल ॥ (पृ० ८२८)
पारब्रहम नानक गुरदेव।
सास सास पारब्रहमु अराधी अपने सतिगुर के बलि जाई ॥ (पृ० १३३८)
बड़ भागी सतिगुरु पाइआ बूझिआ ब्रहम विचारु।
तिसना अगनि सब बूझि गई जन नानक हरि उरिधारि ॥ (पृ० १४१६)
गुरमुखि कमलु विगसिआ सभु आतम ब्रहम पछानु।
हरि हरि किरपा धारि प्रभ जन नानक जपि हरि नामु ॥ (पृ० १४१९)

इस प्रकार पारब्रह्म सतगुरु की कृपा से ही आराधना संभव है। जब जीव ब्रह्म को जान लेता है उस समय उस ब्रह्मज्ञानी की गुणातीत अवस्था का वर्णन इस प्रकार ग्रंथ साहिब जी ने पृ० २७२-७३ पर किया है :

नानक इह लछण ब्रहमगिआनी होइ।
ब्रहमगिआनी सदा निरलेप। जैसे जल महि कमल अलेप॥
ब्रहमगिआनी के मित्र सत्रु समानि। ब्रहमगिआनी के नाही अभिमान॥
ब्रहमगिआनी बंधन ते मुकता···
ब्रहमगिआनी का भोजनु गिआन। नानक ब्रहमगिआनी का ब्रहम धिआनु॥
ब्रहमगिआनी कै एकै रंग। ब्रहमगिआनी कै बसै प्रभु संग॥
ब्रहमगिआनी सुख सहज निवास। नानक ब्रहमगिआनी का नही बिनास॥
ब्रहमगिआनी का दरसु बड़भागी पाइऐ। ब्रहमगिआनी कउ बलि बलि जाइऐ॥
ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर। नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥
ब्रहमगिआनी सभ स्रिसटि का करता। ब्रहमगिआनी सद जीवै नहीं मरता॥
ब्रहमगिआनी मुकति जुगति जिअ का दाता। ब्रहमगिआनी पूरन पुरखु बिधाता॥

वेद, स्मृति, शास्त्र, पुराण

ग्रन्थ साहिब जी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें अध्यात्म के बारे में जो कुछ भी कहा गया है उसके बारे में स्थान-स्थान पर वेदों का प्रमाण भी दिया गया है और शास्त्र, स्मृति तथा पुराणों की साक्षी भी दी गई है। यह बात नहीं है कि नानक जी तथा अन्य गुरुओं ने वेद-शास्त्रों की चर्चा चलाऊ तौर पर कर दी हो। नानकजी बार-बार जोर दे कर यह कहते हैं कि मैंने सब वेदों, शास्त्रों और पुराणों को शोधकर अर्थात गहन अध्ययन करके यह बात पाई है कि पारब्रह्म परमात्मा की आराधना करके ही, उसकी ही कृपा से उसको प्राप्त किया जा सकता है। वे यह चुनौती भी देते हैं कि जो व्यक्ति चाहे वेदों को शोधकर देख ले, वह भी इसी नतीजे पर पहुँचेगा। ग्रंथ साहिब जी के अनुसार हरि की इच्छा से उनके श्वास-रूप में वेद उत्पन्न हुए, पाप-पुण्यमय कर्मों की व्यवस्था हुई और हरि की इच्छा से ही ब्रह्मा, विष्णु, महेश ने इस त्रिगुणमयी सृष्टि का विस्तार किया।

ग्रंथ साहिब जी की यह भी मान्यता है कि वेदों की उत्पत्ति परमात्मा से ही हुई है और उस वेदज्ञान से ही ब्रह्मा सारी सृष्टि की रचना करते हैं। जैसा कि गीता के पन्द्रहवें अध्याय के पन्द्रहवें श्लोक में कहा गया है, "मैं ही वेदों का कर्ता, वेदों का जानने वाला और वेदों के द्वारा जानने योग्य परमतत्त्व हूँ," वैसा ही ग्रंथ साहिब जी में भी कहा गया है :

हरि हरि सिमिरन लगि बेद उपाए ॥ (पृ० २६३)
चारे वेद ब्रहमे कउ दीए। (पृ० ४२३)

इसी बात को पुनः दुहराते हुए ग्रंथ साहिब जी पृ० १०६६ पर कहते हैं, "चारे बेद ब्रहमे को फुरमाइआ" अर्थात् उस पारब्रह्म परमात्मा ने हीं ब्रह्मा को चारों वेदों का ज्ञान प्रदान किया ताकि वो इस सृष्टि की रचना करने में समर्थ हो सकें।

हरि आगिआ होए बेद पापु पुंनु विचारिआ।
ब्रहमा बिसनु महेसु त्रैगुण बिसथारिआ ॥ (पृ० १०६४)

ग्रन्थ साहिब जी की बड़ी स्पष्ट घोषणा है कि वेद-शास्त्रों के अनुसार परमात्मा की आराधना से ही जीव माया से छूटकर परमपद की प्राप्ति कर सकता

है, हरिकृपा से ही हरिभजन सम्भव है :

मनहठि किनै न पाइओ पुछहु वेदा जाइ।
नानक हरि की सेवा सो करे जिसु लए हरि लाइ ॥ (पृ० ८६)
सासत सिम्रिति बेद बीचारे महा पुरखन इउ कहिआ।
बिनु हरि भजन नाही निसतारा सूखु न किनहूँ लहिआ ॥ (पृ० २१५)
साधो राम सरनि बिसरामा।
बेद पुरान पढ़े को इहि गुन सिमरे हरि को नामा ॥...
बेद पुरान जासु गुन गावत ता को नामु हीऐ मो धरु रे ॥ (पृ० २२०)

नानक जी कहते हैं कि हे मनुष्य ! तू उस हरि का नाम हृदय में धारण कर जिसका यश निन्तर वेद-पुराण गाते रहते हैं। इसी बात को और भी सुदृढ़ करते हुए वे कहते हैं :

सासत सिम्रिति सोधि देखहु कोइ।
विणु नावै को मुकति न होइ ॥ (पृ० २२६)

परमात्मा की प्राप्ति में वेद-शास्त्रों में गाई गई नाम की महिमा का बखान करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

नाम के धारे सिम्रिति बेद पुरान।
नाम के धारे सुनन गिआन धिआन ॥ (२८४)
गुण गोबिंद नाम धुनि बाणी।
सिम्रिति सासत्र बेद बखाणी ॥ (पृ० २६६)
हरि हरि सिमरि प्रान आधारु।
अनिक उपाव न छूटनहारु ॥ (पृ० २८८)
दीवा बलै अंधेरा जाइ।
बेद पाठ मति पापा खाइ ॥
बेद पाठ संसार की कार।
पढ़ि पढ़ि पंडित करहि बीचार ॥ (पृ० ७६१)
बेद बखाणि कहहि इकु कहीऐ।
ओहु बेअंतु अंतु किनि लहीऐ ॥ (पृ० ११८८)
सिम्रिति पुराण चतुर बेदह खटु सासत्र जा कउ जापति ॥ (पृ० ४५६)
हरि हरि नाम रसन आराधे।
सिम्रिति सासत बेद बखाने ॥ (पृ० २०२)

इस प्रकार वेद-शास्त्रों की महिमा का गान करते हुए नानक जी कहते हैं :

जप तप संजम पाठ पुराणु।
कहु नानक अपरंपर मानु ॥ (पृ० २२३)

चाहे ग्रन्थ साहिब जी ने भक्ति के नौ प्रकार गिनाए हों या फिर ब्रह्म की सर्वव्यापकता दिखाई हो, या फिर लोगों को भगवान के नाम के जप के लिए बार-बार प्रेरणा दी हो, सभी में ग्रन्थ साहिब जी ने वेद-पुराण व शास्त्रों का ही प्रमाण बार-बार दिया है। यह बात नीचे दी हुई वाणी से स्पष्ट होती है :

भगति नवै परकारा।
पंडित वेदु पुकारा ॥ (पृ० ७१)
बेद पुराण सिम्रिति महि देखु।
ससि अर सूर नख्यत्र महि एकु ॥ (पृ० २९४)
त्रैगुण बिखिआ अंधु है माइआ मोह गुबार।
लोभी अन कउ सेवदे फइ वेदा करै पुकार ॥ (पृ० ३०)
गावनि तुधनो पंडित पड़नि रखीसुर जुगु जुगु वेदा नाले। (पृ० ९)
बेद पुरान सिम्रिति के मत सुनि निमख न होए बसावै ॥ (पृ० ६३३)
पूरन पुरख अचुत अबिनासी जसु वेद पुराणी गाइआ ॥ (पृ० ७८३)
सिम्रिति सासत बेद बीचारे।
जपीऐ नाम जितु पारि उतारे ॥ (पृ० ८०४)
पतित पावन प्रभ बिरदु वेद लेखिआ।
पारब्रहमु सो नैनहु पेखिआ ॥ (पृ० ८०५)
बेद पुराण सिम्रिति हरी जपिआ।
मुखि पंडित हरि गाइआ ॥ (पृ० ९९५)
जो सरणि परे तिस की पति राखै जाइ पूछहु वेद पुराणी हे ॥ (पृ० १०९०)

ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं कि जप, तप और संयम अन्य युगों के धर्म हैं, कलियुग में तो वेदों के अनुसार हरि का नाम जपना ही मुक्ति का एकमात्र रास्ता है। जो वेदों की यह बात नहीं मानता वह बैताल की तरह मारा-मारा फिरता है।

जतु संजम तीरथ ओना जुगा का धरमु है। कलि महि कीरति हरि नामा।
जुगि जुगि आपो आपणा धरमु है। सोधि देखहु बेद पुराना ॥ (पृ० ७९७)
वेदा महि नामु उतमु सो सुणहि नाही फिरहि जिउ बेतालिअ ॥ (पृ० ९१९)

बिना सतगुरु की कृपा के परमात्मा की प्राप्ति असम्भव है और इसी प्रकार सत्संगत भी वेदों के अनुसार मुक्ति का मार्ग हैं। इस बात की बारम्बार घोषणा करते हुए ग्रन्थ साहिब जी वेद के प्रमाण से कहते हैं :

बिन सतगुर किनै न पाई परम गते।
पूछहु सगल बेद सिम्रिते ॥ (पृ० १३४८)

बिनु सतसंग सुखु किनै न पाइआ ।
जाइ पुछहु बेद बीचारु ॥ (पृ० १२००)
नानक सोधे सिम्रिति वेद ।
पारब्रहम गुर नाही भेद ॥ (पृ० ११४२)

इस वाणी में हम देखते हैं कि ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार गुरु और पारब्रह्म में कोई भेद नहीं है :

संत सभा मिलि करहु बखिआण ।
सिम्रिति सासत बेद पुराण ॥ (पृ० ६००)

इस प्रकार ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं कि सन्त सभा में केवल वेद-शास्त्र और पुराणों की ही चर्चा होती है, अन्य बातों की नहीं ।

सासत बेद सिम्रिति सभि सोधे सभ एका बात पुकारी ।
बिनु गुर मुकति न कोऊ पावै मनि वेखहु करि बीचारी ॥ (पृ० ४६५)
सिम्रिति सासत सोधिआ भाई बिणु सतिगुर भरमु न जाइ । (पृ० ६०८)

सिक्खों के दसवें गुरु श्री गोबिन्दसिंह जी महाराज ने अपने द्वारा रचित रामावतार में वेद-शास्त्रों की महिमा बड़ी श्रद्धा से गाई है। भगवान राम के राज्य का वर्णन करते हुए वे रामवतार के ८३७वें एवं ८३९वें पद में कहते हैं :

बहु विध करयो राज को साजा ।
देस देस के जीते राजा ॥
साम दाम अरु दण्ड सभेदा ।
जिह विधि हुती सासना वेदा ॥
अंतक हुती वेद सासना ।
निकसा तैस राम की रसना ॥

वेद-शास्त्रों की चर्चा करते समय ग्रन्थ साहिब जी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसमें स्थान-स्थान पर वेदवाद का बारम्बार खण्डन किया गया है। यह इस बात का प्रमाण है कि गुरु नानकदेव जी तथा अन्य गुरुओं को वेदों का कितना ज्ञान था। किन्तु वे लोग जिन्हें वेदवाद शब्द का सही अर्थ नहीं मालूम है यह समझ लेते हैं कि ग्रन्थ साहिब जी वेदों का खण्डन करते हैं या जहाँ नानक जी केवल वेदवाद से लोगों को हटने का उपदेश देते हैं तो वे समझने लगते हैं कि शायद ग्रन्थ साहिब जी में जहाँ एक ओर वेद-शास्त्रों को स्थान-स्थान पर प्रमाण माना है, वहाँ वेदों को प्रमाण नहीं भी माना है । ऐसा कैसे हो सकता है ? यह असम्भव है कि एक ही ग्रन्थ में दो विपरीत बातें हों । यदि किसी ग्रन्थ में दो विपरीत बातें होंगी तो वह ग्रन्थ ही अमान्य हो जाएगा और उसकी रचना व्यर्थ हो जाएगी।

वेदवाद का खण्डन तो स्वयं वेदों ने ही किया है। वेदों में मनुष्य को तीन मार्ग बतलाये हैं। पहला श्रेय मार्ग यानी परमात्मा की प्राप्ति का मार्ग। दूसरा प्रेय मार्ग यानी इस लोक और परलोक में नाना प्रकार के उपायों द्वारा भोगो एवं स्वर्ग की साधना तथा उनकी प्राप्ति के लिए नाना प्रकार के कर्म। इन उपायों में सभी प्रकार के सकाम पुण्यकर्म आ जाते हैं—सभी प्रकार की तपस्याएँ, यज्ञ, धर्मशाला एवं मन्दिरों का निर्माण, नाना प्रकार के दान, लोगों के कल्याण के लिए अस्पतालों, तालाबों आदि के निर्माण शामिल हैं। जो इन दोनों मार्गों पर नहीं चल सकते वे अधमतम प्राणी हैं और केवल क्षुद्र कीट-पतंग की योनि में बार-बार जनमते-मरते रहते हैं।

किन्तु जो लोग श्रेय मार्ग यानी परमात्मा की प्राप्ति के मार्ग की अवहेलना करके प्रेय मार्ग यानी इस लोक और परलोके के भोगों की प्राप्ति को ही श्रेष्ठ मानते हैं और उन की प्राप्ति के लिए नाना प्रकार के कर्मों का विस्तार करते हैं या वेदमंत्रों और वेदवर्णित यज्ञों का अनुष्ठान केवल स्वर्गप्राप्ति के लिए करते हैं उन्हें वेद में वेदवादी कहा गया हैं। इस प्रकार जिन व्यक्तियों की बुद्धि भोगों की प्राप्ति की लालसा में मोहित हो गई है वे वेदों का सही अर्थ न समझने के कारण कभी श्रेय मार्ग यानी परमात्मा को प्राप्त नहीं कर सकते। गीता के दूसरे अध्याय के ४२-४४वें श्लोक में स्वयं भगवान कृष्ण ने वेदवाद का तिरस्कार किया है। भगवान कहते हैं: "हे अर्जुन जो सकामी पुरुष केवल वेद की श्रुतियों द्वारा स्वर्ग को ही प्राप्त करना परम श्रेष्ठ मानते हैं और यह कहते हैं कि इससे बढ़कर और कुछ नहीं है, वे अविवेकी जन कर्मफल देने वाली और भोग तथा ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए बहुत सी क्रियाओं का विस्तार करने वाली इस प्रकार की दिखाऊ और शोभायुक्त वाणी को बोलते हैं। इस वाणी द्वारा ठगे हुए चित्त वाले तथा भोग और ऐश्वर्य में आसक्ति रखने वाले व्यक्ति परमात्मा की प्राप्ति में साधन-भूत निश्चयात्मक बुद्धि को प्राप्त नही कर सकते।" इसके आगे गीता कहती है कि आत्मावान् व्यक्ति या ब्रह्म को अच्छी तरह से जानने वाले व्यक्ति के लिए वेदों का उतना ही मतलब रह जाता है जितना कि सब ओर जल की बाढ आ जाने पर एक छोटे से कुएँ का। यानी जब पारब्रह्म परमात्मा की कृपा हो जाती है और मनुष्य उसकी ओर बढ़ जाता है तब वेद-शास्त्रों से ऊपर उठ जाता है। यही बात भगवान ने पुनः गीता के आठवें अध्याय के अन्तिम श्लोक में कही है: "परमात्मा को तत्त्वतः जानने वाला योगी, वेदों के पढ़ने में तथा यज्ञ, तप, दान आदि कर्मों को करने में जो पुण्य फल होता है उसका निस्संदेह उल्लंघन कर जाता है और सनातन परमतत्त्व को प्राप्त हो जाता है। इसी गूढ़ वैदिक रहस्य को ग्रन्थ साहिब जी ने कितने सुन्दर ढंग से बार-बार रखा है, यह नीचे दी

गई वाणी से स्पष्ट हो जाएगा :

सिम्रिति सासत्र पड़हि पुराणा।
बादु वखाणहि ततु न जाणा ॥
बेद पुरान पड़े का किआ गुनु।
खर चंदन जस भारा ॥
राम नाम की गति नहीं जानी।
कैसे उतरसि पारा ॥ (पृ० ११०३)

नानक जी कहते हैं कि वेद-पुराण पढ़ने के बाद भी यदि परमात्मा को नहीं पहचाना, राम नाम की गति नहीं जानी तो यह पढ़ना ऐसा ही है जैसे गधे पर लदा हुआ चन्दन का भार। ऐसा व्यक्ति कैसे माया के सागर से पार हो सकता है?

करहि सोमपाकु हिरहि परदरबा अंतरि झूठ गुमान।
सासत्र बेद की बिधि नही जाणहि बिआपे मन कै मान ॥ (पृ० १२०३)

यह बात बड़े स्पष्ट रूप से दर्शाते हुए कि वेदवाद का अर्थ केवल कर्मों का विस्तार करना ही है, परमात्मा की प्राप्ति नहीं, ग्रन्थ साहिब कहते हैं :

ब्रहमण वादु पड़हि करि किरिआ करणी करम कराए।
बिनु बूझे किछु सूझै नाहीं मनमुखु बिछुड़ि दुखु पाए ॥ (पृ० १३३२)

सिम्रिति सासत्र बहु करम कमाए। प्रभ तुमरे दरस बिनु सुखु नाहीं। (पृ० ४०८)

बंधन वेदवादु अहंकार।
बंधन मातु पिता संसार ॥
बंधन करम धरम हउ कीआ···
नानक राम नाम सरणाई। सतिगुरि राखे बंधु न पाई ॥ (पृ० ४१६)

यही नहीं, वेदवाद या इहलोक और परलोक के भोगों के लिए कर्म करने वाला व्यक्ति ग्रन्थ साहिब जी की दृष्टि में केवल पाखण्डी ही है :

बेदु बादु न पाखंडु अउधू गुरमुखि सबदि बीचारी। (पृ० ९०८)
पंडित पड़हि पड़ि बादु बखाणहि तिना बूझ न पाई ॥ (पृ० ९०९)
जब लग मन बैकुंठ की आसु।
तब लग होइ नहीं चरन निवासु ॥ (पृ० २५)
बेद पड़हि पड़ि बादु बखाणहि।
घट महि ब्रहमु तिसु सबदि न पछाणहि ॥ (पृ० १०५८)

वेदवाद या कर्मकाण्ड के द्वारा उपार्जित पाप-पुण्य केवल नरक-स्वर्ग की ही उधेड़-बुन में जीव को फंसाता रहेगा। वह उससे तभी मुक्त हो सकेगा जब वह घट-घट में व्यापक ब्रह्म को सतगुरु की कृपा से पहचानेगा। इस बात को ग्रन्थ

साहिब जी वेदों के ही प्रमाण से कहते हैं :

वेद पुकारे पुंन पापु सुरग नरक का बीउ ।
जो बीजै सो उगवै खांदा जाणै जीउ ॥ (पृ० १२४३)
वाचै वादु न वेद बीचारै ।
आपि डूबै किउ पितरा तारै ॥
घटि घटि ब्रहमु चीनै जनु कोइ ॥ (पृ० ६०४)

इस प्रकार हम देखते हैं कि ग्रन्थ साहिब जी में पाण्डित्य से ऊपर भक्ति, कर्म-काण्ड से ऊपर ज्ञान एवं स्वर्गलोक के महान से महान भोगों से ऊपर परमात्मा की प्राप्ति को माना है। इसी बात को बार-बार समझाया गया है और वेद-शास्त्रों के प्रमाण से भी समझाया गया है। ग्रंथ साहिब जी के ये शब्द इस बात को कितने सरल ढंग से हमारे सामने रखते हैं :

कबीर बामनु गुरू है जगत का भगतन का गुरु नाहि।
अरझि उरझि कै पचि मूआ चारउ बेदहु माहि ॥ (पृ० १३७७)

ग्रन्थ साहिब जी के शब्दों में वेद, शास्त्र, स्मृति और और पुराणों का उद्देश्य क्या है ? वे हमको किस बात की प्रेरणा देते हैं ? वेदों का सारतत्त्व क्या है ? उसका कुछ शब्दों में इस प्रकार वर्णन किया गया है :

सिम्रिति सासत्र बेद पुराण ।
पारब्रहम का करहि बखिआण ॥ (पृ० ८६७)

वेद, शास्त्र, स्मृति, पुराण आदि का असली उद्देश्य, उनकी असली बात, उनकी असली खोज केवल पारब्रह्म परमात्मा का गुणगान ही है। उसी पार-ब्रह्म को पाने का प्रयत्न करना ही का प्राणीमात्र का असली उद्देश्य है।

६

अवतार-भाव

पुराणों की यह विशेषता है कि उनमें परमात्मा के विभिन्न अवतारों की लीला-कथाओं के माध्यम से, ऋषि-मुनियों, राजऋषियों, सिद्ध-साधकों एवं भक्तों की जीवन-कथाओं एवं आदर्शों की विस्तारपूर्वक चर्चा से, परमात्मा-प्राप्ति के गूढ़ से गूढ़ रहस्यों को, कठिन-से-कठिन दार्शनिक सिद्धान्तों को, एवं वेदों के मर्म को बड़े ही रसमय ढंग से एवं सरल भाषा में मनुष्य जाति के सामने रखा गया है। पुराणों में माया के चक्र में फँसे हुए जीव की गति का भी, जो चौरासी लाख ऊँच-नीच योनियों में निरन्तर अपने असली स्वरूप को भूल कर भ्रमण किया करता है, विस्तार से वर्णन है। इसी सन्दर्भ में पुराणों में स्वर्ग-नरक, यमराज और उनके लेखाधिकारी चित्रगुप्त द्वारा पाप-पुण्य के लेखे-जोखे का भी विस्तार से वर्णन किया गया है। नीचे के लोकों में गति तथा कीट-पतंग और उनसे भी अधम जड़ योनियों से बचने के उपाय-स्वरूप तीर्थ, जप, दान आदि की भी विस्तारपूर्वक चर्चा की गई है। पुराणों की एक और विशेषता यह है कि उनके अनुसार इस घोर कलयुग में जीव की मुक्ति का सबसे सरल उपाय भगवान का नामस्मरण है। यह नामस्मरण चाहे स्वामी-भाव से हो या पिता के रूप में या प्रियतम के रूप में हो या फिर सखा के रूप में ही क्यों न हो। यदि सच्चे हृदय से मनुष्य परमात्मा का स्मरण करता रहेगा तो वह निश्चय ही परमात्मा की कृपा से इस भवसागर से पार हो जाएगा। यह पौराणिक भाव ग्रन्थसाहिब जी में आदि से अन्त तक पिरोया हुआ है

ग्रन्थ साहिब जी की वाणी में कदम-कदम पर भगवत्नाम की महिमा गायी गई है और कदम-कदम पर भगवान के विभिन्न लीला-अवतारों और उन लीला-अवतारों के माध्यम से भक्तों की रक्षा तथा नीच-से-नीच व्यक्तियों के उद्धार के उदाहरणों की ओर मनुष्यजाति का ध्यान खींचा गया है। परन्तु यह स्पष्ट है कि ग्रन्थ साहिब जी को नरसिंह अवतार के रूप में भक्त प्रह्लाद की रक्षा तथा हिरण्यकश्यप के वध की लीला सबसे अधिक भाई है। यही कारण है कि ग्रन्थ साहिब जी में केवल भक्त प्रह्लाद की ही पूरी कथा, चाहे वह संक्षेप में ही हो, ११३३ पृष्ठ से ११९४ पृष्ठ तक चार बार आई है। वैसे इसकी चर्चा तो स्थान-

स्थान पर की ही गयी है—जैसे कि पृष्ठ ६३७ पर आता है :

भगता दी सदा तू रखदा हरि जीउ धुरि तू रखदा आइआ।
प्रहिलाद जन तूधु राखिलए हरि जीउ हरणाखसु मारि पचाइआ ॥

इस लेख में हम केवल ग्रन्थ साहिब जी में वर्णित भक्त प्रह्लाद की कथा से सम्बन्धित वाणी ही प्रस्तुत करेंगे। किन्तु इसके पहले हम दो शब्द इस कथा की महिमा के बारे में भी कहना चाहेंगे। भगवान के अवतारों में एक यही कथा ऐसी है जहाँ इन्द्रियों की पहुँच से परे पारब्रह्म परमात्मा सबके देखते-देखते भक्त की रक्षा के लिए प्रकट हो जाते हैं। जब सभा में खम्भा फाड़कर भगवान नरसिंह-रूप में प्रकट हुए उस समय प्रह्लाद ने उनका आवाहन नहीं किया था। वे तो मानो हिरण्यकश्यप द्वारा प्रह्लाद को दी गई इस चुनौती को स्वीकार करते हुए प्रकट हुए कि यदि तेरा भगवान् सब जगह है तो यहाँ प्रकट होकर तुझे बचा लेगा। हिरण्यकश्यप ने यहाँ एक गहरी चाल चलनी चाही थी। जब प्रह्लाद किसी भी उपाय से मारा नहीं जा सका और हर बार उसने यही कहा कि सर्वव्यापी हरि ही उसकी रक्षा कर रहे हैं तब हिरण्यकश्यप ने भरे दरबार में उसकी परीक्षा लेनी चाही। उसको अपने बल का और सीमित देव-शक्तियों की अपनी उपासना का बड़ा अभिमान था। उसको इस बात का घमण्ड था कि उसके द्वारा उपास्य सीमित शक्तियों के अलावा दुनिया में परमात्मा नाम की कोई शक्ति है ही नहीं। उसका यह विश्वास था कि प्रह्लाद की रक्षा करने वाली शक्ति कोई ऐसी शक्ति है जो उसके सामने प्रकट नहीं हो सकती। और साथ ही उसको इस बात की कल्पना भी नहीं थी कि चट्टानों से निर्मित खम्भे में भी—ऐसी चट्टानों में जिन पर लाखों वर्षों तक धूप-पानी का प्रभाव नहीं पड़ता—प्रह्लाद का उपास्य देवता निवास करता होगा। वह मूर्ख अपने घमंड में यह भूल गया कि यह पंच महाभूत की चट्टान परमात्मा का एक स्थूलतम बाह्य रूप है, उस परमात्मा की इच्छाशक्ति से निर्मित सृष्टि का एक बाहरी स्वरूप है। उसको शायद यह भ्रम था कि प्रह्लाद भरे दरबार में या तो झूठा साबित होकर अपना विचार बदल देगा अथवा अपने ही झूठ के कारण उसकी तलवार से मारा जाएगा। किन्तु हिरण्यकश्यप की यह चाल परमात्मा को मंजूर नहीं थी। हिरण्यकश्यप की ललकार पर परमात्मा यदि प्रकट न भी होता तो भी उसकी महिमा में कोई अन्तर न पड़ता। किन्तु यह एक ऐसा अवसर आ गया था जब दुनिया के सबसे शक्तिशाली दुष्ट ने भरे दरबार में उसके एक परम भक्त को चुनौती दी थी। बस भगवान ने भक्त की लाज रखने के लिए अपना विरद संभाला और क्षण भर में निराकार परमात्मा खंभा फाड़ कर सबके सामने नरसिंह रूप में साकार हो उठा।

हाथि खडग करि धाइआ अति अहंकारि।
हरि तेरा कहा तुझु लए उबारि॥
खिन महि भै आन रूपु निकसिआ थंम्ह उपाड़ि।
हरणाखसु नखी बिदारिआ प्रहलादु लीआ उबारि॥
संत जना के हरि जीउ कारज सवारे।
प्रहलाद जन इकीह कुल उधारे॥
गुर कै सबदि हउमै बिखु मारे।
नानक राम नामि संत निसतारे॥ (पृ०११३३)

हम ध्यान से इस वाणी के इन शब्दों के देखें "निकसिआ थंम्ह उपाड़ि" यानी वह हरि उस खंभे को फाड़कर बाहर निकल आया। दूसरे शब्दों में वह हरि-स्वरूप परमात्मा उस खम्भे में सदैव ही विराजमान था। यह नहीं कि किसी ने पहले बाहर से खंम्भे में प्रवेश किया और फिर निकल आया।

प्रह्लाद की कथा और भी विस्तार से पृ० ११५४ पर गुरु नानक जी की वाणी में आयी है जिसके कुछ अंश हम नीचे दे रहे हैं :

पिता प्रहलादु पड़ण पठाइआ। लै पाटी पाधे कै आइआ॥
नाम बिना नह पड़उ अचार। मेरी पटीआ लिखि देहु गोबिंद मुरारि॥...
पुत्र प्रहिलाद सिउ वादु रचाइआ। अंधा न बूझै कालु नेड़ै आइआ॥
पिता प्रहलाद सिउ गुरज उठाई। कहां तुम्हारा जगदीस गुसाई॥
जगजीवनु दाता अंति सखाई। जह देखा तह रहिआ समाई॥
थंम्हु उपाड़ि हरि आपु दिखाइआ। अहंकारी दैतु मारि पचाइआ॥
भगता मनि आनंदु वजी वधाई। अपने सेवक कउ दे वडिआई॥
जंमणु मरणा मोहु उपाइआ। आवणु जाणा करतै लिखि पाइआ॥
प्रहलाद के कारजि हरि आपु दिखाइआ। भगता का बोलु आगै आइआ॥
देव कुली लखिमी कउ करहि जैकारु। माता नरसिंघ का रूपु निवारु॥
लखिमी भउ करै न साकै जाइ। प्रहलादु जन चरणी लागा आइ॥

ऊपर की वाणी में पाठक देखेंगे कि यहाँ पर भी हरि की सर्वव्यापकता को कितने स्पष्ट रूप में दिखाया गया है : "थंम्हु उपाड़ि हरि आपु दिखाइआ"। भाव स्पष्ट है। चट्टान में भी विराजमान श्रीहरि ने केवल चट्टान का पर्दा उखाड़ कर अलग कर दिया और प्रह्लाद के कारण अपने आपको दिखाया। ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं, उस समय भगवान् इतने क्रोधित हो उठे थे कि देवताओं की प्रार्थना पर साक्षात् लक्ष्मी जी भी भयवश भगवान् के सामने न जा सकीं। उस समय प्रह्लाद को ही आगे करके लक्ष्मी जी जाती हैं। प्रह्लाद जब जाकर चरणों में पड़ता है तो नरसिंह भगवान् प्रह्लाद को अपनी गोद में बैठा कर प्रेम-

बस शान्त और आनन्दमग्न हो जाते हैं। इसी प्रकार भक्त प्रह्लाद की कथा पृ० ११६५ में नामदेव जी की वाणी में तथा पृ० ११९४ पर कबीर जी की वाणी में विस्तारपूर्वक आती है। नीचे हम कबीर जी की वाणी में प्रह्लाद-कथा का रसास्वादन कराते हैं :

प्रहलाद पठाए पड़नसाल। संगि सखा बहु लीए बाल ॥
मोकउ कहा पढ़ावसि आल जाल। मेरी पटीआ लिखि देहु स्री गुपाल ॥
नहीं छोडउ रे बाबा राम नामु। मेरी अउर पढ़न सिउ नहीं कामु ॥
तू राम कहन की छोडु बानि। तूझु तुरतु छडाऊ मेरी कहिओ मानि ॥
मोंकउ कहा सतावहु बार बार। प्रभि जल थल गिरि कीए पहार ॥
इकु रामु न छोडउ गुरंहि गारि। मोकउ घालि जारि भावै मारि डारि ॥
काढ़ि खडगु कोपिओ रिसाइ। तुझ राखनहारो मोहि बताइ ॥
प्रभ थंम ते निकसे कै बिसथार। हरनाखसु छेदिओ नख बिदार ॥
ओइ परम पुरख देवाधि देव। भगति हेत नरसिंघ भेव ॥
कहि कबीर को लखै न पार। प्रहलाद उधारे अनिक बार ॥

बस यही बात ग्रन्थ साहिब जी बार-बार कहते हैं कि भगत हेतु वह पारब्रह्म परमात्मा नरसिंह रूप में बार-बार प्रकट होता है और अन्य रूपों में भी भक्त की रक्षा के लिए क्षण भर में लीला-अवतार धारण किया करता है।

पुराणों ने और भक्ति-मार्ग के सन्तों ने सगुण रूप में ब्रह्म की उपासना अधिकतर नारायण या विष्णु के रूप में या उनके पूर्ण अवतार राम और कृष्ण के रूप में की है। ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

जिसु मनि वसै नराइणो सो कहीए भगवंतु ॥ (पृ० १३७)
जो न भजंते नाराइणा।
तिनका मैं न करउ दरसना ॥ (पृ० ११६३)

नानक जी के अनुसार जिसके हृदय में नारायण का वास नहीं है उसका दर्शन करना भी पाप है। नारायण या विष्णु रूप में ब्रह्म के उपासक को वैष्णव कहते हैं। ग्रन्थ साहिब जी में वैष्णव की महिमा बड़े विस्तार से गाई गयी है :

बैसनो सो जिसु ऊपरि सु प्रसनं।
बिसन की माइआ ते होइ भिन ॥
करम करत होवै निहकरम।
तिसु बैसनो का निरमल धरम ॥
काहू फल की इछा नहीं बाछै।
केवल भगति कीरतन संगि राचै ॥

मन तन अंतरि सिमरन गोपाल ।
सभ ऊपरि होवत किरपाल ।।
आपि द्रिड़ै अवरह नामु जपावै ।
नानक ओहु बैसनो परमगति पावै ।। (पृ० २७४)

यहाँ यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि ग्रन्थ साहिब जी में वैष्णव का उपरोक्त वर्णन ब्रह्मज्ञानी के विस्तारपूर्वक वर्णन के तुरन्त बाद आया है। इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि नानक जी की दृष्टि में एक ब्रह्मज्ञानी और एक सच्चे वैष्णव में कोई अन्तर नहीं। ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार पतित से पतित व्यक्ति भी यदि नारायण की भक्ति करता है तो वह धन्य है और वही असली ज्ञानी है।

सो सुरता सो बैसनो सो गिआनी धनवंतु ।
सो सूरा कुलवंतु सोइ जिनि भजिआ भगवंतु ।।
खत्री ब्राहमणु सूदु बैसु उधरै सिमरि चंडाल ।
जिनि जानिओ प्रभु आपना नानक तिसहि रवाल ।। (पृ० ३००)

भगवान विष्णु की महिमा गाते हुए नानक जी कहते हैं :

नाभि कमल ते ब्रहमा उपजे बेद पड़हि मुखि कंठि सवारि ।
ता को अंतु न जाई लखणा आवत जात रहै गुबारि ।। (पृ० ४८६)

और भगवान विष्णु के चरणों का गुणगान करते हुए नानक जी कहते हैं :

सासतु बेदु सिम्रिति सरु तेरा सुरसरी चरण समाणी ।
ताके चरण जपै जनु नानकु बोले अंम्रित वाणी ।। (पृ० ४२२)

नारायण की महिमा का बखान करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

अंति कालि नाराइणु सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै ।
बदति तिलोचनु ते नर मुकता पीतंबरु वाके रिदै बसै ।। (पृ० ५२६)
भगति नारदी रीदै न आइ काछी कुछु तपु दीना ।।···
जिह कुल साधु बैसनो होइ ।
बरन अबरन रंकु नहीं ईसरु बिमल बासु जानीऐ जगि सोइ ।
ब्रहमन बैस सूद अरु ख्यत्री डोम चंडार मलेछ मन सोइ ।
होइ पुनीत भगवंत भजन ते आपुर तारि तारे कुल दोइ ।।
(पृ० ८५८)

ब्राहमणु खत्री सूद वैस चारि वरन चारि आस्रम हहि ।
जो हरि धिआवै सो परधानु ।
···जन नानकु तिस के चरन पखालै
जो हरि जनु नीचु जाति सेवकाणु ।। (पृ० ८६१)

इस प्रकार कितनी मार्मिक वाणी में नानक जी ने सारी वर्ण-व्यवस्था को स्वीकार करते हुए यह स्पष्ट घोषणा की है कि वही व्यक्ति श्रेष्ठ है, वही सबसे प्रधान है जो हरि का ध्यान करता है। और उन में भी नानक जी उस भक्त के चरण पखारते हैं जो नीच से नीच कही जानेवाली जातियों की सेवा में लगा है। वैष्णव का परम धर्म तो सब जगह प्राणिमात्र में अपने प्रभु का ही दर्शन करना है :

लोभु मोह सभु कीनो दूरि।
परम बैसनो प्रभ पैखि हजूरि॥ (पृ० ११४७)

इसके आगे हम ग्रन्थ साहिबजी में स्थान-स्थान पर वर्णित भगवान के अवतारी भाव के पद दे रहे हैं जो कि इतने स्पष्ट हैं कि पाठक उनके अर्थ को सहज ही समझ लेंगे।

रे मन ओट लेहु हरि नामा।
जा कै सिमरनि दुरमति नासै पावहि पदु निरबाना॥
···अजामलु कउ अंत काल मै नाराइन सुधि आई।
जां गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥
नाहन गुनु नाहिन कछु बिदिआ धरमु कउनु गजि कीना।
नानक बिरदु राम का देखो अभै दानु तिहि दीना॥ (पृ० ६०१-२)
संगति का गुनु बहुतु अधिकाई पड़ि सूआ गनक उधारे।
परसन परस भए कुबिजा कउ लै बैकुंठि सिधारे॥
अजामल प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे।
मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जम कंकर मारि बिदारे॥ (पृ० ६८१)
धनि धंनि ओ राम बेनु बाजै। मधुर मधुर धुनि अनहत गाजै॥
धनि धनि मेघा रोमावली। धनि धनि क्रिसन ओढ़ै कांबली॥
धनि धनि तू माता देवकी। जिह ग्रिह रमईआ कवलापती॥
धनि धनि बनखंड बिद्राबना। जह खेलै स्री नाराइना॥
बेनु बजावै गोधनु चरै। नामे का सुआमी आनद करै॥
कर धरे चक्र बैकुंठ ते आए गज हसती के प्रान उधारीअले॥
दुहसासन की सभा द्रोपती अंबर लेत उबारीअले॥
गोतम नारि अहलिआ तारी पावन केतक तारीअले॥
ऐसा अधमु अजाति नामदेउ तउ सरनागति आईअले॥ (पृ० ६८८)
जपिओ नामु सुक जनक गुर बचनी हरि हरि सरणि परे।
दालदु भंजि सुदामे मिलिओ भगती भाइ तरे॥
भगति वछलु हरि नामु क्रितारथु गुरमुखि क्रिपा करे।

मेरे मन नामु जपत उधरे ॥
ध्रू प्रहिलादु बिदरु दासी सुतु गुरमुखि नामि तरे ॥···
बेसुआ रवत अजामलु उधरिओ मुखि बोलै नाराइणु नरहरे।
नामु जपत उग्र सैणि गति पाई तोड़ि बंधन मुकति करे।
सेवक पैज रखै मेरा गोविंदु सरणि परे उधरे।
जन नानक हरि किरपा धारी उरधरिओ नामु हरे ॥ (पृ० ९९५)

दुर्योधन के दरबार में जब भगवान कृष्ण पाण्डवों के दूत के रूप में सन्धि का प्रस्ताव लेकर गये उस समय दुर्योधन ने उनको अपना अतिथि बनाने का निमन्त्रण दिया था। किन्तु भगवान कृष्ण ने दुर्योधन का निमन्त्रण स्वीकार नहीं किया और वे विदुर के घर गए। इस भाव को ग्रन्थ साहिबजी ने मार्मिक रूप रूप में रखा है :

राजन कउनु तुमारै आवै।
ऐसो भाउ विदर को देखिओ ओहू गरीबु मोहि भावै ॥
हसती देखि भरम ते भूला स्री भगवानु न जानिआ।
तुमरो दूधु बिदर को पान्हो अंम्रितु करि मैं मानिआ ॥
खीर समानि सागु मैं पाइआ गुन गावत रैनि बिहानी ॥ (पृ० ११०५)

पुनः ग्रन्थ साहिब जी अवतार-भाव को दर्शाते हुए कहते हैं :

राजा राम जपत को को न तरिओ।
गुर उपदेसि साध की संगति भगतु भगतु ता को नमु परिओ ॥
संख चक्र माला तिलकु बिराजित देखि प्रतापु जमु डरिओ।
निरभउ भए राम बल गरजित जनम मरन संताप हिरिओ ॥
अंबरीक कउ दीओ अभै पदु राजु भभीखन अधिक करिओ।
नउनिधि ठाकुरि दई सुदामै ध्रूअ अटलु अजहू न टरिओ ॥ (पृ०११०५)

ग्रन्थ साहिब जी के अन्तिम कुछ पन्नों में भाटों द्वारा गुरू के पाँच सिक्ख गुरुओं की महिमा का बड़ी सरस वाणी में वर्णन है। किन्तु उससे भी बड़ी बात यह है कि इस गुरु-महिमा के वर्णन के साथ-साथ पुराणों में वर्णित भगवान के लीला-अवतारों का वर्णन भी किया गया है। इस वाणी के कुछ अंश नीचे दे रहे हैं :

वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ।
कवल नैन मधुर बैन कोटि सैन संग सोभ कहत मा जसोद
जिसहि दही भातु खाहि जीउ।
देखि रूपु अति अनूप मोह महा मग भई किंकनी सबद
झनतकार खेलु पाहि जीउ।
काल कलम हुकमु हाथि कहहु कउनु मेटि सकै इसु बंम्हु ग्यानु।

ध्यानु धरत हीऐ चाहि जीउ।
सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही
वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ॥
राम नाम परम धाम सुध बुध निरीकार बेसुमार
सरबर कउ काहि जीउ।
सुथर चित भगत हित भेखु धरिओ हरनाखसु
हरिओ नख बिदारि जीउ।
संख चक्र गदा पदम आपि आपु कीओ छदम
अपरंपार पारब्रहम लखै कउनु ताहि जीउ।
सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही
वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ॥
पीतबसन कुंद दसन प्रिआ सहित कंठ माल
मुकटु सीसि मोर पंख चाहि जीउ।
बे वजीरे बड़े धीर धरम अंग अलख अगम
खेलु कीआ आपणै उछाहि जीउ।
अकथ कथा कथी न जाइ तीनि लोक रहिआ समाइ
सुतह सिध रूपु धरिओ साहन कै साहि जीउ।
सति साचु स्री निवासु आदि पुरखु सदा तुही
वाहिगुरू वाहिगुरू वाहिगुरू वाहि जीउ॥
सतिगुरू सतिगुरू सतिगुरू गुबिंद जीउ।
बलिहि छलन सबल मलन भग्ति फलन कान्ह,
कुअर निहकलंक बजी डंक चढ़ू दल रविंद जीउ।
राम रवण दुरत दवण सकल भवण कुल करण
सरब भूत आपि ही देवाधि देव सहस मुख फनिंद जीउ।
जरम करम मछ कछ हुआ बराह
जमुना कै कूलि खेलु खेलिओ जिनि गिंद जीउ।
नामु सारु हीए धारु तजु बिकारु मन गयंद।
सतिगुरू सतिगुरू सतिगुरू गुबिंद जीउ॥ (पृ० १४०२-३)

भगवान की लीला के बन्धन में बाँधने वाली जो अनादिकालीन डोर है वह है भक्त का अनन्य प्रेम। जब व्यक्ति अपनी अहमन्यता खो देता है, और मन, बुद्धि एवं प्राण में केवल एक परमात्मा को ही धारण कर लेता है तब भगवान और भक्त का भेद ही मानो समाप्त हो जाता है। उस स्थिति में भक्त के प्रेम के बन्धन में भगवान सब नाच नाचते हैं और भक्त भगवान को अपने प्रेम के बूते

ही चुनौती दे देता है। किस प्रकार दही, माखन और छाछ के लिए गोपियाँ उस पारब्रह्मस्वरूप कृष्ण को नाच नचाती थीं, यह जगत-विदित है। सूरदास जी की चुनौती की कथा से सभी अवगत हैं। कहा जाता है कि एक बार सूरदास जी मार्ग भटक गए तो भगवान कृष्ण बालरूप में आकर उनका हाथ पकड़कर रास्ते पर ले आए। भगवान का दिव्य स्पर्श पाकर सूरदास जी ने उनके हाथ को मजबूती से पकड़ लिया। किन्तु भगवान ने अपना हाथ छुड़ा लिया। उस समय सूरदासजी ने भगवान को यह प्रेम-भरी चुनौती दी :

बाँह छुड़ाए जात हो निबल जान के मोहि।
हृदय छाड़ के जाहुंगे सबल बदौंगो तोहि ॥

एक ऐसी ही प्रेम-भरी चुनौती ग्रन्थ साहिब जी में भी भगवान के प्रति आती है :

जउ हम बांधे मोह फास हम प्रेम बधनि तुम बाधे।
अपने छूटन को जतनु करहु हम छूटे तुम आराधे ॥ (पृ० ६५८)

यदि तुमने मुझे माया-मोह के पाश में बाँध रखा है तो मैंने भी तुम्हें प्रेम के बन्धन में बाँध लिया है। मैं तो तुम्हारी आराधना करके उस माया के पाश से छूट गया। अब तुम मेरे बन्धन से छूटने का प्रयास करो।

७

प्रिया-प्रियतम भाव

"नानक धंनु सोहागणी" (पृ० १६)। एक पतिव्रता, एक सुहागिन नारी के रूप में परमात्मा की पति रूप में उपासना करते हुए ग्रन्थ साहब जी अंत में कहते हैं : "बडभागीआ सोहागणी जिन्हा गुरमुखि मिलिआ हरिराइ।" (पृ० १४२१)

मध्य युग में निर्गुण की उपासना करने वाले जितने भी संत हुए हैं वे जब भी समाधि से उठते थे तो परमानन्द के विरह में तड़पते हुए वे परमात्मा की उपासना या आकांक्षा एक प्रियतम और पति के रूप में ही करते रहते थे। जागृत अवस्था में बाहरी जगत में व्यवहार करते हुए भी वे क्षण मात्र के लिए भी अपने प्रियतम से अलग नहीं होना चाहते थे।

परमात्मा के विरह में या तो भागवत में गोपियाँ रोई हैं या फिर ग्रन्थ साहिब जी में नानक और उनकी परम्परा में उनके उत्तराधिकारी अन्य गुरु। ग्रन्थ साहिब जी में संकलित सन्त कबीर और फरीद की वाणी में भी अपने पति और प्रियतम भगवान के प्रति विरह-वेदना छलक उठती है। सारे ग्रन्थ साहिब जी में भक्त की इस विरह-वेदना के इतने अंगारे स्थान-स्थान पर बिखरे हुए हैं कि कोई भी श्रद्धालु पाठक इन अंगारों से दग्ध हुए बिना नहीं रह सकता। नानक जी की बिरहवाणी कई स्थान पर तो इतनी भावुक हो उठती है कि भगवत्प्रेम में पाठकों की अश्रुधारा बहना स्वाभाविक है। ग्रन्थ साहिबा जी की बाणी में प्रिया-प्रियतम भाव इतने विस्तार से आया है कि हम अपने इन लेखों के माध्यम से उसकी झलक भी देने में असमर्थ है। नीचे हम एक सुहागिन के रूप में परमात्मा की उपासना से सम्बन्धित ग्रन्थ साहिब जी में आये कुछ पद दे रहे हैं।

गुरमुखि सदा सोहागणी पिरु राखिआ उरधारि।
मिठा बोलहि निवि चलहि सेजै रवै मतारु।
सोभावंती सोहागणी जिन गुर का हेतु अपारु॥ (पृ० ३१)

प्रिउ सिउ राती धन सोहागणि नारि।
जन नानकु बोले ब्रहम बीचारु॥ (पृ० ३७०)

मसतकि भागु मै पिरु घरि आइआ।
थिरु सोहागु नानक जन पाइआ॥ (पृ० ३८४)

मीठी आगिआ पिर की लागी । सउकनि घर की कंति तिआगी ।
प्रिअ सोहागनि सीगारि करी । मन मेरे की तपति हरी ॥
ना मैं कुलु ना सोभावंत । किआ जाना किउ भानी कंत ॥
मोहि अनाथ गरीब निमानी । कंत पकरि हम कीनि रानी ॥
जब मुखि प्रीतमु साजनु लागा । सूख सहज मेरा धनु सोहागा ॥
कहु नानक मोरी पूरन आसा । सतगुरु मेली प्रभ गुणतासा ॥ (पृ० ३९४)
गुर का सबदु करि दीपको इह सत की सेज बिछाइ री ।...
साई सोहागणि नानका जो भाणी करतारि री ॥ (पृ० ४००)
बरसु घना मेरा मनु भीना ।
अंम्रित बूंद सुहानी हीअरै गुरि मोही मनु हरि रसि लीना ॥
सहजि सुखी वर कामणि पिआरी जिसु गुरबचनी मनु मानिआ ।
हरि वरि नारि भई सोहागणि मनि तनि प्रेमु सुखानिआ ॥ (पृ० १२५४)

किन्तु यह अमर सुहाग, यह पारब्रह्म-रूप पति की प्राप्ति तो तभी हो सकती है जब जीव अपने सारे अहं को नष्ट कर दे ।

सोहागणी सदा पिरु पाइआ हउमै आपु गवाइ ।
पिर सेती अनदिनु गहि रही सची सेज सुखु पाइ ॥ (पृ०४२८)

इसी भाव को और भी स्पष्ट करते हुए ग्रन्थ साहिब जी अपने प्रिय कन्त से मिलने का उपाय बताते हुए पृष्ठ ७५० पर कहते हैं :

सभि अवगण मै गुणु नही कोई । किउकरि कंत मिलावा होई ॥
ना मै रूपु न बंके नैणा । ना कुल ढंगु ना मीठे बैणा ॥
सहजि सीगार कामणि करि आवै । ता सोहागणि जा कंतै भावै ॥...
हउमै जाई ता कंत समाई । तउ कामणि पिआरे नवनिधि पाई ॥
अनिक जनम बिछुरत दुखु पाइआ । करु गहि लेहु प्रीतम प्रभ राइआ ॥

नानक जी कहते हैं कि जिस नारी को उसका पति नहीं चाहता उसको दुनिया में और कोई भी नहीं चाहता। ऐसे प्रियतम से अलग रहकर वह केवल दुःख ही दुःख पाती है । उस प्रियतम को तो ऐसे ही ढूंढ़ना चाहिए जैसे कोई परदेसी अपने घर के लिए तड़पता है और अंतत: वहीं जाकर विश्राम पाता है ।

सुणि नाह पिआरे इक बेनंती मेरी ।
तू निजघरि बसिअड़ा हउ रुलि भसमै ढेरी ॥
बिनु अपने नाहै कोइ न चाहै किआ कहीए किआ कीजै ।
(पृ० १११९)
सखी आउ सखी वसि आउ सखी असी पिर का मंगलु गावह ।
तजि मानु सखी तजि मानु सखी मतु आपणे प्रीतम भावह ।

मोहि मछली तुम नीर तुझ बिन किउ सरै।
मोहि चात्रिक तुम्ह बूंद त्रिपतउ मुखि परै।...
लाडिले लाड लडाई सभ महि मिलु हमारी होई गते।
चीति चितवउ मिटु अंधारे जिउ आस चकवी दिनु चरै।
नानकु पइपै प्रिअ संगि मेली मछुली नीरु न वीसरै ॥...
मेरी सेज सोही देखि मोही सगल सहसा दुखु हरा ॥
नानकु पइअपै मेरी आस पूरी मिले सुआमी अपरंपरा ॥ (पृ० ८४७)
माई मोरो प्रीतमु रामु बतावहु री माई।
हउ हरि बिनु खिनु पलु रहि न सकउ जैसे करहलु बेलि रीझाई ॥
(पृ० ३६६)
मित्र घणेरे करि थकी मेरा दुखु काटै कोइ।
मिलि प्रीतमु दुखु कटिआ सबदि मिलावा होइ ॥ (पृ० ३७)
आवहु मिलहु सहेलीहो मैं पिरु देहु मिलाइ ॥ (पृ० ३८)
कवन गुन प्रानपति मिलउ मेरी माई।
रूप हीन बुधि बल हीनी मोहि परदेसनि दूर ते आई।
नाहिन दरबु न जोबन माती मोहि अनाथ की करहु समाई।
खोजत खोजत भई बैरागनि प्रभ दरसन कउ हउ फिरत तिसाई ॥
दीन दइआल क्रिपाल प्रभ नानक साधसंगि मेरी जलनि बुझाई ॥
(पृ० २०४)
सुणि सखीए मेरी नींद भली मैं आपनड़ा पिरु मिलिआ।
भ्रमु खोइआ साँति सहजि सुआमी परगासु भइआ कउलु खिलिआ ॥
वरु पाइआ प्रभु अंतरजामी नानक सोहागु न लिया ॥ (पृ० २४६)

किन्तु जब मनुष्य योनि में भी भगवान को न जाना, जब युवावस्था में भी प्रियतम से भेंट न हुई, तो इस जीवन का सार ही चला गया। जब जीवन के सार की बात मालूम पड़ती है तब प्रियतम के बिछोह में जो रातदिन टिटिहरी बनी रहती है उसे बिरहा कहते हैं। ऐसे विरहा से सम्बन्धित वाणी भी गुरु ग्रंथ साहिब जी में स्थान-स्थान पर आती है। ग्रन्थ साहिब जी में संत फरीद के ये पद कितने हृदयद्रावक हैं :

तै साहिब की मै सार न जानी। जोबनु खोइ पाछै पछतानी ॥
काली कोइल तू कित गुन काली। अपने प्रीतम के हउ बिरहै जाली।
पिरहि बिहून कतहि सुखु पाए। जा होइ क्रिपालु त प्रभू मिलाए ॥
विधन खुही मुंध इकेली। ना को साथी ना को बेली।
करि किरपा प्रभि साध संगि मेली ॥ (पृ० ७६४)

नानक जी जिस प्रीतम को पाकर अपने को सुहागिन मानते हैं वह प्रीतम पारब्रह्म परमात्मा ही है जिनके विरह में वे रत रहना चाहते है।

चकवी नैन नींद नहि चाहै बिनु पिर नींद न आई।
सुरु चहै प्रिउ देखै नैनी निवि निवि लागै पांई॥
पिर भावै प्रेमु सखाई।
तिसु बिनु घड़ी नहीं जगि जीवा ऐसी पिआस तिसाई॥...
रैनि बबीहा बोलिओ मेरी माई॥
प्रिअ सिउ प्रीति न उलटै कबहू जो तै भावै साई॥
नीद गई हउमै तनि थाकी सच मति रिदै समाई॥
रूखीं बिरखीं ऊडउ भूखा पीवा नामु सुभाई॥
लोचन तार ललता बिललाती दरसन पिआस रजाई॥
प्रिअ बिनु सीगारु करी तेता तनु तापै कापरु अंगि न सुहाई॥
अपने पिआरे बिनु इकु खिनु रहि न सकउ बिन मिले नींद न पाई॥
(पृ० १२७३-७४)

पी के बिरह में तड़पते हुए और पी की ही कामना में सारी रात आँखों में गुजारते हुए नानक जी कहते हैं:

मुंध रैणि दुहेलड़ीआ जीउ नीद न आवै।
नानक साधन मिलै मिलाई बिनु पिर नीद न आवए॥ (पृ० २४२)
आवहु दइआ करे जीउ प्रीतम अति पिआरे।
कामणि बिनउ करे जीउ सचि सबदि सीगारे॥ (पृ० २४५)
सासु बुरी घरि वासु न देवै पिर सिउ मिलण न देइ बुरी।
सखी साजनी के हउ चरन सरेवउ हरि गुर किरपा ते नदरि धरी॥
(पृ० ३५५-५६)

नानक जी के लिए तो पी के बिना समस्त सिंगार वृथा ही है। जैसे पपीहा या चकवा अपने प्रियतम की खोज में अपने दिल में दिनरात एक कसक बसाए ही रहता है, बस वही कसक जीव को परमात्मा की प्राप्ति के लिए होनी चाहिए।

स्वप्न में प्रियतम के दर्शन पाने वाले नानक जी उस स्वप्न की ही कामना करते हुए ऐसी नींद को ही अपना सौभाग्य मानते हैं। स्वप्न में मिला प्रभु का दर्शन मानों सारे जीवन को सफल कर गया हो।

इकु न रुना मेरे तनुका बिरहा जिनि हउ पिरहु विछोड़ी।
सुपनै आइआ भी गइआ मै जलु भरिआ रोइ।
आइ न सका तुझ कनि पिआरे भेजि न सका कोइ॥

आउ सभागी नींदड़ीए मतु सहू देखा सोइ।
तै साहिब की बातजि आखै कहु नानक किआ दीजै। (पृ० ५५८)
आवहु मिलहु सहेलीहो सिमरहु सिरजणहारो।
बईअरि नामि सोहागणी सचु सवारणहारो॥
गावहु गीतु न बिरहड़ा नानक ब्रहम बीचारो॥ (पृ० ५८१)
सखी काजल हार तंबोल सभै किछु साजिआ।
सोलह कीए सीगार कि अंजनु पाजिया।
जे घरि आवै कंतु त सभु किछु पाईऐ॥
हरिहां कंतै बाझु सीगारु सभु बिरथा जाईए॥ (पृ० १३६१-६२)

नानक जी की सारी साधना, उनकी तपस्या और उपासना का लक्ष्य कौन है? उनके समस्त दिव्य प्रेम का सागर किस उपास्य के लिए, किस पति या प्रियतम के लिए, अपने किस चिरसखा के लिए निरन्तर उमड़ता रहता है? वह पारब्रह्म परमात्मा का कौन सा स्वरूप है, कौन सा नाम है जिसके लिए नानक जी एक प्रियाभाव धारण करके एक सुहागिन नारी के सतीत्व को अपने में बसाये हुए हैं, एक प्यासे पपीहे की तरह निरन्तर अकुलाते रहते हैं और उसके विरह में निरन्तर सुलगते रहते हैं? हमें उनके प्रियतम की पहचान, उनके सच्चे पति से परिचय, उनके सच्चे बादशाह से आमना-सामना स्वयं नानक जी के अलावा और कौन करवा सकता है? नानक जी बरबस कह उठते हैं:

वरु पाइआ सोहागणी केवल एकु मुरारि॥ (पृ० ४२८)

नानक जी के प्यारे का परिचय देते हुए ग्रंथ साहिब जी कहते हैं:

हम चिनी पातिसाह सांवले बरनां॥ (पृ० ७२७)
सगल समग्री मै घर की जोड़ी। आस पिआसी पिर कउ लोड़ी॥
कवन कहा गुन कंत पिआरे। सुघड़ सरूप दइआल मुरारे॥
(पृ० ७३७)
प्रीति प्रीति गुरीआ मोहन लालना।
जपि मन गोबिंद एकै अवरु नहीं को लेखै
संत लागु मनहि छाडु दुबिधा की कुरीआ॥ (पृ० ७४६)
तू जानु गिआनी अंतरजामी आपै कारणु कीना।
सुनहु सखी मनु मोहनि मोहिआ तनु मनु अंम्रिति भीना॥
(पृ० ७६४)
मनु तनु निरमलु अति सोहणा भेटिआ क्रिसन मुरारि॥ (पृ० ७८८)
मोहनु लालु मेरा। प्रीतम मन प्राना। (पृ० १००५)
मटकि मटकि चलु सखी सहेली मेरे ठाकुर के गुन गारे।
गुरमुखि सेवा मेरे प्रभ भाई में सतिगुर अलखु लखारे॥

नारी पुरखु पुरखु सभ नारी सभु एको पुरखु मुरारे ।।

उसी एक पुरुष मुरारी से मिलन की चाह को, उसी एक मोहन, गोपाल, गोबिन्द से मिलन की अन्तर्वेदना को बड़ी ही कसकमय वाणी में नानक जी कहते हैं :

सुंदर तन धिआन सुंदर तन धिआन हे
मनु लुबध गोपाल गिआन हे
जाचिक जन राखत मान ।
प्रभ मान पूरन दुख बिदीरन सगल इछ पुजंतीआ ।
हरि कंठ लागे दिन सभागे मिलि नाह सेज सोहंतीआ ।।
प्रभ द्रिसटि धारी मिले मुरारी सगल कलमल भए हान ।
बिनवंति नानक मेरी आस पूरन मिले स्रीधर गुन निधान ।।
(पृ० ६२)

अति प्रीतम मन मोहना घट सोहना प्रान अधारा राम ।
सुंदर सोभा लाल गोपाल दइआल की अमर अपारा राम ।
गोपाल दइआल गोबिंद लालन मिलहु कंत निमाणीआ ।
नैन तरसन दरस परसन नह नीदे रैणि विहाणीआ ।
गिआन अंजन नाम बिंजन भए सगल सीगारा ।
नानकु पइअंपै संत जंपै मेलि कंतु हमारा ।।
चल चित बित अनित प्रिअ बिनु कवन बिधी न धीजीऐ ।
खान पान सीगार बिरथे हरि कंत बिनु किउ जीजीऐ ।।
आसा पिआसी रैनि दिनीअरु रहि न सकीए इकु तिलै ।
नानक पइअंपै संत दासी तउ प्रसादि मेरा पिरु मिलै ।।
(पृ० ५४२-४३)

सिआम सुंदर तजि नीद किउ आई ।। (पृ० ७४५)

ऐसे हरिरूप प्रीतम के बिना नानक जी के लिए खान-पान-सिंगार सब व्यर्थ हैं और न उनके बिना वे एक क्षण अलग रह सकते हैं। और जब नानक जी को हजार प्रयत्न करने पर भी अपने प्रियतम के दर्शन नहीं होते तो अथाह प्रेम से व्यथित होकर, प्रेम में सारा धीरज खोकर वे अपने मोहनलाल से दर्शन देने के लिए कितनी प्रेम भरी विनती करने लगते हैं :

सुणि यार हमारे सजण इक करउ बेनंतीआ ।
तिसु मोहन लाल पिआरे हउ फिरउ खोजंतीआ ।
तिसु दसि पिआरे सिरु धरी उतारे इक भोरी दरसनु दीजै ।
नैन हमारे प्रिअ रंग रंगारे इकु तिलु भी न धीरीजै ।

प्रभु सिउ मनु लीना जिउ जल मीना चात्रिक जिवै तिसंतीआ।
जन नानक गुरु पूरा पाइआ सगली तिखा बुझंतीआ ।। (पृ० ७०३)
माई मोहि प्रीतमु देहु मिलाई।
सगल सहेली सुख भरि सूती जिह घरि लालु बसाई ।।
मोहि अवगन प्रभु सदा दइआला मोहि निरगुनि किआ चतुराई।
करउ बराबरि जो प्रिअ संगि रातीं इह हउमै की ढीठाई ।।
एक निमख महि मेरा सभु दुखु काटिआ नानक सुखि रैनि बिहाई ।।
(पृ० १२६७)

प्रिया-रूपी नानक जी को अपने श्यामसुन्दर की, अपने माधव की प्रीति का पूरा विश्वास है। उनकी तो अपने प्रियतम से ऐसी डोर जुड़ी हुई है कि वह छूट ही नहीं सकती, न छुड़ाई जा सकती है।

मू लालन सिउ प्रीति बनी।
तोरी न तूट छोरी न छूटै ऐसी माधो खिच तनी ।।
दिनसु रैनि मन माहि बसतु है। तू करि किरपा प्रभ अपनी ।।
बलि बलि जाउ सिआम सुंदर कउ अकथ कथा जाकी बात सुनी ।।
जन नानक दासनि दासु कहीअत है।
मोहि करहु क्रिपा ठाकुर अपुनी ।। (पृ० ८२७)

और जब प्रियतम अपने पास आ गया, तब फिर करना ही क्या रह गया ?

निसि बासुर प्रिअ प्रिअ मुखि टेरउ नींद पलक नहीं जागिओ ।।
(पृ० १२०३)

माया के सारे द्वन्द्व-फंद दूर हो जाने पर और प्रियतम को अपने में पा लेने पर अब क्या रह गया ?

अब मोरो नाचनो रहो।
लालु रंगीला सहजे पाइओ सतिगुरु बचनि लहो ।।
कुआर कंनिआ जैसे संगि सहेरी प्रिअ बचन उपहास कहो।
जउ सुरिजनु ग्रिह भीतरि आइओ तब मुखु काजि लजो ।।
(पृ० १२०३)

गोपाललाल-रूपी प्रियतम ठाकुर के मिलने पर चारों तरफ मंगल ही मंगल का बधावा हो रहा है और आनन्द की ही सेज बिछ रही है :

मेरे मनि अनदु भइआ जीउ वजी वाधाई।
घरि लाल आइआ पिआरा सभ तिखा बुझाई ।।
मिलिआ त लालु गुपालु ठाकुरु सखी मंगलु गाइआ।
सभ मीत बंधप हरखु उपजिआ दूत थाउ गवाइआ ।।

अनहत बाजे बजहि घर महि पिर संगि सेज बिछाई ।
बिनवंति नानकु सहजि रहै हरि मिलिआ कंतु सुखदाई ।। (पृ० २४७)

विरह-मिलन की इस लीला में जब पुनः विरह की अवस्था आती है और वह लीलामय प्रियतम क्षणभर के लिए भी मन और प्राण से विलग हो जाता है तब अपने कृष्ण, अपने विठोबा के लिए एक विरहनी की तरह डरपाते हुए आँखो में आँसू भरकर नानक जी कहते हैं :

दहदिस छत्र मेघ घटाघट दामनि चमकि डराइओ ।
सेज इकेली नीद नहु नैनह पिरु परदेसि सिधाइओ ।।
किउ बिसरै इहु लालु पिआरो सरब गुणा सुख दाइओ ।
मंदरि चरिकै पंथु निहारउ नैन नीरि भरि आइओ ।। (पृ० ६२४)

और जब प्रियतम पाहुने घर आते हैं तब देखिए किस प्रकार उनका स्वागत होता है और किस प्रकार सारे दुख क्षण भर में मिट जाते हैं :

बरसै मेघु सखी घरि पाहुन आए ।
मोहि दीन क्रिपा निधि ठाकुर नव निधि नामि समाए ।।
अनिक प्रकार भोजन बहु कीए बहु बिंजन मिसटाए ।
करी पाकसाल सोच पवित्रा हुणि लावहु भोगु हरि राए ।।
दुसट बिदारे साजन रहसे इहि मंदिर घर अपनाए ।
जउ ग्रिह लालु रंगीओ आइआ तउ मै सभि सुख पाए ।।
संत सभा ओट गुर पूरे धुरि मसतकि लेखु लिखाए ।
जन नानक कंतु रंगीला पाइआ फिरि दुखु न लागै आए ।।
(पृ० १२६६)

८

राम

ग्रन्थ साहिब जी ने हरिनाम के बाद परमात्मा के जिस नाम का सबसे अधिक गुणगान किया है वह है रामनाम। राम, राजा राम और रघुनाथ इत्यादि शब्दों का लगभग २५०० बार प्रयोग हुआ है। रामपूर्व तापनीयोपनिषद् में रामनाम के विविध अर्थ बतलाते हुए आता है: 'राजते वा महीं स्थितः सन् इति रामः" यानी जो महीतल पर स्थित होकर भक्तजनों का संपूर्ण मनोरथ पूर्ण करते हैं और राजा के रूप में सुशोभित होते हैं वे ही राम हैं। अथवा सच्चिदानन्द, महाविष्णु, श्रीहरि जब रघुकुल में दशरथ जी के यहां अवतीर्ण हुए उस समय उनका नाम राम हुआ। राक्षस जिनके द्वारा मरण को प्राप्त होते हैं वे राम हैं। अथवा जो राक्षसों को अपने मनुष्य रूप से प्रभाहीन कर देते हैं वे राम हैं। अथवा वे राजाओं को अपने आदर्श चरित्र द्वारा धर्म-मार्ग का उपदेश देते हैं, नामोच्चारण करने पर ज्ञानमार्ग की प्राप्ति कराते हैं, ध्यान करने पर वैराग्य देते हैं और अपने विग्रह की पूजा करने पर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, इसलिए भूतल पर उनका नाम राम विख्यात हुआ। वेद कहते हैं कि यथार्थतः उस अनन्त, नित्यानन्द-स्वरूप, चिन्मय ब्रह्म में योगीजन रमण करते हैं इसलिए वह पारब्रह्म परमात्मा ही रामपद के द्वारा प्रतिपादित होता हैं। इस प्रकार यद्यपि ब्रह्म चिन्मय, अद्वितीय, अवयव-रहित और पंचभौतिक शरीर से रहित है, तथापि भक्तजनों के अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए वह चिन्मय देह को प्रकट करता है, भक्तों के स्नेहवश निराकार ब्रह्म नराकार धारण कर लेता है। ग्रंथ साहिब जी में रामनाम का गान इन सभी रूपों और भावों के अनुसार हुआ है।

साधो इह तनु मिथिआ जानों।
या भीतरि जो राम बसतु है साचो ताहू पछानों॥
जन नानक सबही में पूरन एक पुरख भगवाना।
घटि घटि रमइआ रमत राम राई··· (पृ० १७२)
निरगुण रामु गुणह वसि होई॥ (पृ० २२२)

जत कत देखउ तत तत तुम ही मोहि इहु बिसुआसु होइ आइओ।
कै पहि करउ अरदासि बेनती जउ सुनतो है रघुराइओ ॥ (पृ०२०५)
राम रमहु बड़भागीहो जलि थलि महिअलि सोइ।
नानक नामि अराधिऐ बिघनु न लागै कोइ ॥ (पृ० ५२१)

ग्रन्थ साहिब जी को उस रामरूपी पारब्रह्म परमात्मा की लीला इस भूतल पर रामावतार और राजा राम के रूप में ही अधिक भाई है। वे कहते हैं :

जानी जानी रे राजा राम की कहानी।
अंतरि जोति राम परगासा गुरमुखि बिरलै जानी ॥ (पृ०९७०)

ग्रन्थ साहिब जी की यह स्पष्ट घोषणा है कि राजा के रूप में अवतरित भगवान राम का नाम ही सच्चा ब्रह्मज्ञान है :

राजा राम नामु मोरा ब्रहम गिआनु ॥ (पृ० ११५९)
उबरत राजा राम की सरणी ॥ (पृ० २१५)

नानक की को जीवन के समस्त वैभव से राजा राम ही प्यारा है। वे कहते हैं :

मालु खजीना सुत भ्रात मीत सभहूं ते पिआरा राम राजे ॥
(पृ० ४५४)

ऐसे राजा राम की शरण में जाकर पतित से पतित भी पावन हो जाता है। इस भाव को दर्शाती हुई रविदास जी की वाणी ग्रन्थ साहिब में इस प्रकार आती है :

मेरी जाति कमीनी पांति कमीनी ओछा जनमु हमारा।
तुम सरनागति राजा रामचंद कहि रविदास चमारा ॥ (पृ०६५९)

भगवान राम के दिव्य, चिन्मय, कमलरूपी मुख की झांकी ही नानक जी के जीवन का लक्ष्य है। उस राम के ही चरणकमलों को वे सन्तों की कृपा से अपने हृदय में बसाना चाहते हैं। नानक जी कहते हैं :

अविलोकउ राम को मुखारबिंद।
खोजत खोजत रतनु पाइओ बिसरी सभ चिंद ॥
चरन कमल रीदै धारि। उतरिआ दुखु मंद ॥
राज धनु परवारु मेरे सरबसो गोबिंद ॥
साध संगमि लाभु पाइओ नानक फिर न मरंद ॥ (पृ० १३०४)

भगवान राम के अवतार-स्वरूप का व्यापक वर्णन आगे जाकर भाटों द्वारा बनाई गई पदावलियों में भी आता है जो गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी का ही अभिन्न अंग हैं। इन पदावलियों में भाटों ने विभिन्न गुरुओं की आध्यात्मिक महिमा गाई है। नीचे दिए पदों से पाठक इसे सहज ही समझ सकेंगे :

रघुबसि तिलकु सुंदरु दसरथ घरि मुनि बंछहि जाकी सरणं।
(पृ० १४०१)

गावै जमदगनि परसरामेसुर कर कुठार रघुनेजु हरिओ॥
उधौ अक्रूरु विदरु गुण गावै सरबातमु जिनि जाणिओ।
कबि कल सुजसु गावउ गुर नानक राजु जोगु जिनि मांणिओ।
(पृ० १३८९-९०)

सतजुगि तै माणिओ छलिओ बलि बावन भाइओ।
त्रैते तै माणिओ राम रघुवंसु कहाइओ।
दुआपरि क्रिसन मुरारि कंसु किरतारथु किओ।
उग्रसैण कउ राजु अमै भगतह जन दीओ।
कलिजुगि प्रमाणु नानक गुरु अंगदु अमरु कहाइओ॥ (पृ० १३९०)
मनहि न कीजै रोसु जमहि न दीजै दोसु।
निरमल निरबाण पदु चीन्हि लीजै॥
जसरथ राइ नंदु राजा मेरा रामचंदु
प्रणवै नामा ततु रसु अंम्रितु पीजै। (पृ० ९७३)

लोक-कल्याण के सन्दर्भ में भारतवर्ष में हमेशा ही रामराज्य के आदर्श की कल्पना होती रही है। क्योंकि राम के ही राज्य में मनुष्य, यहाँ तक की प्राणी-मात्र, दैहिक, दैविक और भौतिक, तीनों ही प्रकार के सन्तापों से मुक्त था। इस आदर्श की चर्चा करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं:

राखनहार अपार प्रभ ता की निरमल सेव।
राम राज रामदासपुरि कीन्हे गुरदेव॥ (पृ० ८१७)

फिर क्यों नहीं ऐसे प्रभु राजा राम के चरणों में जाने का नानक जी सबको उपदेश दें? और क्यों नहीं उनका ही गुण गान करने का आदेश दें?

राजा राम की सरणाइ।
निरभउ भए गोबिंद गुन गावत साध संगि दुखु जाइ॥ (पृ० ८९९)

किन्तु इस राम को किस लगन से भजा जाय कि उसकी प्राप्ति हो? इसका निर्देश देते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं:

राम जपहु जिउ ऐसे ऐसे।
ध्रू प्रहिलाद जपिओ हरि जैसे॥ (पृ० ३३७)

राम का निवास हृदय में तभी होगा जब हृदय से सब वासना निकल जायेगी:

बिखिआ अजहु सुरति सुख आसा।
कैसे होईहैं राजा राम निवासा॥ (पृ० ३३०)

जब भक्त की रक्षा का भार भगवान स्वयं अपने ऊपर ले लेते हैं तो सब कुछ

आनन्दमय हो जाता है :

होई राजे राम की रखवाली ।
सूख सहज आनद गुण गावहु मनु तनु देह सुखाली ॥ (पृ० ६२०)

रामनाम की अपरम्पार महिमा गाते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

राम नामु हरि भेटीऐ हरि रामै नामि समावैगो ।
जो जो जपै सोई गति पावै जीउ ध्रू प्रहिलादु समावैगो ॥ (पृ०१३०६)
जीवतु राम के गुण गाइ ।
करहु क्रिपा गोपाल बीठुले बिसरि न कबही जाइ ॥ (पृ० १२२३)
सालग्राम बिप पुजि मनावहू सुक्रितु तुलसी माला ।
राम नामु जपि बेड़ा बाँधहू दइआ करहु दइआला ॥...
बगुले ते फुनि हंसुला होवै जे तू करहि दइआला ।
प्रणवति नानकु दासनिदासा दइआ करहु दइआला ॥ (पृ० ११७१)
मांगउ राम ते इकु दानु ।
सगल मनोरथ पूरन होवहि सिमरउ तुमरा नामु ॥ (पृ० ६८२)
देवा पाहन तारीअले । राम कहत जन कस न तरे ॥
तारी ले गणिका बिनु रूप कुबिजा बिआधि अजामिलु तारीअले ।
दासी सुत जनु बिदरु सुदामा उग्रसैन कउ राज दीए ।
जपहीन तपहीन कुलहीन क्रमहीन नामे सुआमी तेऊ तरे ॥ (पृ० ३४५)
गिरि तर जल जुआला भै राखिओ राजा राम माइआ फेरी ॥ (पृ० ११६५)

इस घोर कलियुग में ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार केवल रामनाम ही एक सार है, एक आधार है और यही शास्त्रों तथा ऋषियों-मुनियों का निर्णय है। ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार प्राणीमात्र का एक ही काज है और वह है रामनाम का जपना तथा लाखों बार जपना।

उचरहु राम नामु लखबारी । (पृ० १९४)
बेद पुरान सिम्रित सुधाख्यर ।
कीने राम नाम इक आख्यर । (पृ० २६२)
चतुरथि चारे बेद सुणि सोधिओ ततु बीचारु ।
सरब खेम कलिआण निधि राम नामु जपि सारु ॥ (पृ० २९७)
सासत्र बेद सोधि सोधि देखे मुनि नारद बचन पुकारे ।
राम नामु पड़हु गति पावहु सत संगति गुरि निसतारे ॥
(पृ० ९८३)
कलजुग महि राम नामु उरधारु ॥ (पृ० ११२९)
कलजुग महि राम नाम है सारु ॥ (पृ० ११३०)

रामनाम के गुणगान में नानक जी ऐसे झूम उठते हैं कि उनकी वाणी प्रस्फुटित होती हुई कह उठती है :

राम नाम गुन गावहु हरि प्रीतम उपदेसि ॥
सुखु होत हरि हरे हरि हरे हरे भजु राम राम राम ॥
सभ सिसटि धार हरि तुम किरपाल करता सभु ।
तू तू तू राम राम राम ।
जन नानको सरणागती देहु गुरमति भजु राम राम राम ॥
(पृ० १२९७)

गुरु तेग़बहादुर जी के इस पद से तो हम सब भलीभाँति परिचित ही हैं।

राम सिमर राम सिमर इहै तेरै काजि है।...
राम भजु राम भजु जनमु सिरातु है॥ (पृ० १३५२)

ग्रन्थ साहिब जी के अन्तिम शब्दों में पृ० १४२९ पर अत्यन्त मार्मिक एवं गूढ़ ज्ञानदान करते हुए नानक जी कहते हैं :

संग सखा सभ तजि गए कोउ न निबहिओ साथ ।
कहु नानक इह बिपत मै टेक एक रघनाथ ॥

दसवें गुरु श्री गोविन्दसिंह जी महाराज ने तो भगवान के रामरूप के पूर्णावतार पर 'रामावतार' नाम से पूरा महाकाव्य ही लिखा है। ८६४ पदों में रचित 'रामावतार' को पूरा करते हुए गुरु गोविंदसिंह जी महाराज ने ८५९वें पद में राम-कथा के फल एवं महिमा के बारे में जो पद लिखा है वह अत्यन्त ही मार्मिक है तथा सबके पढ़ने लायक है। वे लिखते हैं :

जो यह कथा सुने अरु गावै । दुख पाप तिह निकट न आवै ॥
बिषन भगत की ए फल होई । आधि व्याधि छवै सके न कोई ।

९

कृष्ण

इस समस्त सगुण सृष्टि का संचालन नारायण या विष्णु नामधारी वे पारब्रह्म परमात्मा ही करते हैं। वे श्रीनारायण या विष्णु या श्रीहरि दुष्टों के विनाश एवं भक्तों की रक्षा हेतु अपनी माया को अपने अधीन कर, चिन्मय देह धारण कर, विभिन्न रूपों में अवतरित होते रहते हैं और संसार के उद्धार के लिए नाना प्रकार की लीलाएं करते रहते हैं। परमात्मा के इन पूर्णावतारों में सबसे प्रमुख दो अवतार हैं—रामावतार और कृष्णावतार। दसवें गुरु श्री गोविन्द-सिंह जी ने इन दोनों ही अवतारों पर महाकाव्य लिखे हैं। गुरु महाराज जी ने कृष्णावतार २४९६ पदों में लिखा है। यह ज्ञान, भक्ति और प्रेम का एक अभूत-पूर्व ग्रंथ है।

ग्रन्थ साहिब जी में वर्णित राम के निर्गुण और सगुण भावों की एक झलक हमने अपने पिछले लेख में दी है। इस लेख मे हम कृष्ण के निर्गुण-सगुण परमात्मा-स्वरूप की एक झलक प्रस्तुत करने का प्रयत्न कर रहे हैं। कृष्ण का गुणगान ग्रंथ साहिब जी में उनके अन्य नामों के साथ ही दिया गया है, जैसे वासुदेव, गोविन्द, मधुसूदन, माधव, मुरारि, जगन्नाथ, मोहन, बनवारी, केशव आदि। आइए पहले हम ग्रन्थ साहिब जी में वर्णित कृष्ण नाम के पारब्रह्म-स्वरूप, उनके निरंजन-स्वरूप के कुछ उदाहरण प्रस्तुत करें।

एक क्रिसनं सरबदेवा देव देवा त आतमह।
आतमं स्री बास्व देवस्य जे कोइ जाणसि भेव।
नानक ताको दासु है सोई निरंजन देव॥ (पृ० १३५३)
करहू अनुग्रह पारब्रहम हरि किरपा धारि मुरारि॥ (पृ० ४३१)
सो ब्रहमु अजोनी है भी होनी घट भीतरि देखु मुरारी जीउ॥ (पृ० ५८८)
नारी पुरुखु पुरुखु सभ नारी सभु एको पुरुखु मुरारे॥···
मेरे मन भजु ठाकुर अगम अपारे। (पृ० ९८३)
गोबिंद दामोदर दइआल माधवे पारब्रहम निरंकारा॥ (पृ० ६१४)
एको नामु एको नाराइणु त्रिभवण एका जोति॥ (पृ० ९९२)
पारब्रहमु परमेसुरु सुआमी दूख निवारण नाराइणे॥···

दीन दइआल जगदीस दमोदर हरि अंतरजामी गोबिंदे।
ते निरभउ जिन स्रीरामु धिआइआ
गुरमति मुरारि हरि मुकुंदे ॥···
भगत जना की पैज हरि राखै जन नानक आपि हरि क्रिपा करे ॥
(पृ० १३२१)

जैसा कि ऊपर के आखिरी शब्द में हम देखते हैं, वह निरंजन, पारब्रह्म परमात्मा कृष्णनाम से भक्तों की पैज रखने के लिए सगुण रूप में सुलभ हो जाता है। इसी रूप में आगे ग्रन्थ साहिब जी द्वारा वर्णित पारब्रह्म के कृष्ण रूप की लीला का और रसास्वादन करें :

आपे गोपी कानु है पिआरा बनि आपे गऊ चराहा।
आपे सावल सुंदरा पिआरा आपे वंसु वजाहा।
कुवलिआपीड़ु आपि मराइदा पिआरा करि बालक रूपि पचाहा ॥···
करि बालक रूप उपाइदा पिआरा चंडूरु कंसु माराहा ॥
जो गरबै सो पचसी पिआरे जपि नानक भगति समाहा ॥ (पृ० ६०६)
मोहन तेरे ऊचे मंदर महल अपारा।···
मोहन तेरे बचन अनूप चाल निराली।···
बेअंत गुण तेरे कथे न जाही सतिगुर पुरख मुरारे ॥···
जपि मना तूं राम नराइणु गोविंदा हरि माधो ॥···
दुख हरण दीन सरण स्रीधर चरन कमल अराधिऐ ॥···
बिनवंति नानक करहु किरपा गोपाल गोबिंद माधो ॥ (पृ० २४८)

ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार मनुष्य का असली धन मुरारि का नाम लेना ही है। उसके आगे लाखों-करोड़ों हाथी-घोड़ों की सम्पत्ति भी कुछ नहीं है। कृष्ण के इसी नाम को धारण करते हुए शिवजी तथा सनकादि ऋषि संसार से विरक्त होकर रहते हैं। ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

हमरा धनु माधउ गोबिंद धरणी धरु इहै सार धनु कहिए।···
इसु धनु कारणि सिव सनकादिक खोजत भए उदासी।···
मनि मुकुंद जिहबा नाराइनु परै न जम की फासी ॥···
तुम घरि लाख कोटि अस्व हसती हम घरि एकु मुरारी ॥(पृ० ३३६)

इस कृष्ण-मुरारि के ही कोटि-कोटि जन पांव पूजते हैं। यही मधुसूदन, गुरु के मुख से उपदेश ग्रहण करने पर, संसार से पार उतारते हैं। बस इस गोविन्द-रूपी हरि का ही ध्यान करना चाहिए :

दीन दइआल गोपाल गोबिंदा हरि धिआवहू···
गुरमुखि मधुसूदनु निसतारे। गुरमुखि संगी क्रिसन मुरारे।···

निरहारी केसव निरवैरा । कोटि जना जाके पूजहि पैरा । (पृ० ९८)

पर नानक जी को तो कृष्ण का गोविन्द नाम सबसे प्यारा लगता है । और इसी के आसरे वे माया के इस गहन वन में भी बेपरवाह होकर रहते हैं । इसी गोविन्द नाम के आसरे ही कलियुग के सारे क्लेश उनसे दूर भाग जाते हैं । वे इसी गोविन्द-गोपाल के पतित-पावन चरणों को सुमिर कर सदैव जागना चाहते हैं । क्योंकि यही गोविन्द, यही गोपाल उनके सर्वव्यापी पारब्रह्म हैं । नानक जी कहते हैं :

लाल गुपाल गोबिन्द प्रभ गहिर गंभीर अथाह ।
दूसर नाही अवर को नानक बेपरवाह ।। (पृ० २५२)
सासि सासि सिमरहु गोबिंद ।। (पृ० २९५)
नारद मुनि जन सुक बिआस जसु गावत गोबिंद ।। (पृ० २९८)
प्रभु गोपाल दीन दइआल पतित पावन ।
पारब्रहम हरि चरण सिमरि जागु ।
करि भगति नानक पूरन भागु ।। (पृ० ४०९)
गोबिंद गुण गावण लागे ।
हरि रंगि अनुदिन जागे ।। (पृ० ७८८)
रे जिहबा करउ सतखंड ।
जामि न उचरसि स्री गोबिंद ।। (पृ० ११६३)
लाल गोपाल दइआल रंगीले ।
गहिर गंभीर बेअंत गोबिंदे ।। (पृ० ९८)

नानक जी को तो अष्टमी तिथि इसीलिए भाती है कि वह भगवान कृष्ण का जन्मदिन है :

सगली थीति पासि डारि राखी ।
असटम थीति गोविंद जनमासी ।। (पृ० ११३६)
सभि गावहु गुन गोविंद हरे गोविंद हरे गोविंद हरे । (पृ० १३२५)
निरधनं धन नाम नरहर ।।
अनाथ नाथ नाथ गोबिंदह बलहीण बल केसवह । (पृ० १३५५)

भगवान कृष्ण के अन्य नामों से सम्बन्धित गुरु ग्रन्थ साहिब जी की वाणी के कुछ अन्य अंशों से हम आपको को परिचित कराना चाहते हैं :

आठ पहर धिआईऐ गोपालु । नानक दरसनु देखि निहालु ।। (पृ० २००)
उआ ते ऊतमु गनउ चंडाला । नानक जिह मनि बसहि गुपाला ।।(पृ० २५३)
टूटी गाढ़नहार गुोपाल । सरब जिआ आपे प्रतिपाल । (पृ० २८२)

गोपाल तेरा आरता।
जो जन तुमरी भगति करंते तिन के काज सवारता॥ (पृ० ६९५)

मोहन नाम पर नानक जी विशेष रूप से रीझे हैं। वे कहते हैं:

मोहनु प्रान मान रागीला।
बासि रहिओ हीअरे कै संगे पेखि मोहिओ मनु लीला॥
मिलबे की महिमा बरनि न साकउ नानक परै परीला॥ (पृ० ४९८)
मोहन लाल अनूप सरब साधारीआ।
गुर निवि निवि लागउ पाइ देहु दिखारीआ॥ (पृ० २४१)
अति प्रीतम मन मोहना घट सोहना प्रान अधारा राम। (पृ० ५४२)
प्रगटे गुपाल गोबिंद लालन कवन रसना गुण भना। (पृ० ५४३)

नानक जी का मोहन सब जगह पूर्ण रूप में विराज रहा है। वे कहते हैं:

पूरन पूरि रहिओ सब ठाई।
पूरन मन मोहन घट घट मोहन जब खिचै तब छाई। (पृ० १२३६)

ग्रन्थ साहिब जी माधव नाम से भी लौ लगाने को कहते हैं। क्योंकि उस चतुर्भुज परमात्मा को कोई मन और बुद्धि की चतुरता से नहीं जान सकता।

रे जन मनु माधव सिव लाईऐ।
चतुराई न चतुरभुजु पाईऐ। (पृ० ३२४)
माधउ जा कउ है आस तुमारी॥
ता कउ कछु नाही संसारी॥ (पृ० १८८)
माधउ हरि हरि हरि मुखि कहीऐ॥
दीन दइआल दमोदर राइआ जीउ। (पृ० २१६)
माधो हम ऐसे तू ऐसा।
हम पापी तुम पाप खंडन नीको ठाकुर देसा॥ (पृ० ६१३)
क्रिपा करहु मधुसूदन माधउ मै खिनु खिनु साधू चरण पखईआ॥
(पृ० ८३५)

मधुसूदन जपिऐ उरधारि॥...
हरि हिरदै जपि नाम मुरारी। (पृ० ११३५)

नानक जी के गोविन्द कोई साधारण देवता नहीं हैं। वे गोविन्द, गोपाल, कृष्ण तो साक्षात् पारब्रह्म परमेश्वर हैं जिनके रोम-रोम में कोटि-कोटि ब्रह्माण्ड घूम रहे हैं, और करोड़ों, ब्रह्मा, विष्णु और महेश जिनकी इच्छा से अनेकों ब्रह्माण्डों की रचना, पालन और संहार कर रहे हैं। ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं:

ऐसो धणी गुविंदु हमारा। बरनि न साकउ गुण बिसथारा॥
कोटि बिसन कीने अवतार। कोटि ब्रहमंड जाके धरमसाल।
कोटि महेस उपाइ समाए। कोटि ब्रहमे जगु साजण लाए॥...

कोटि इंद्र ठाढे हैं दुआर ।···कोटि तीरथ जाके चरन मझार ॥
कोटि तपीसर तप ही करते । कोटि मुनीसर मोनि महि रहते ॥
जत कत देखउ तेरा वासा । नानक कउ गुरि कीओ प्रगासा ॥
(पृ० ११५६)

भला ऐसे गोविन्द, गोपाल, कृष्ण की साधना में लीन रहनेका नानक जी क्यों न मन को उपदेश दें ? नानक जी की दृष्टि में तो श्यामसुन्दर को छोड़कर किसी और को जो चाहता है वह कोढ़ी की जोंक के समान है :

सिआम सुंदर तजि आन जु चाहत जिउ कुसटी तनि जोंक ॥
(पृ० १२५३)

क्रिपाल दइआल गोपाल गोबिंद जो जपै तिसु सीधि ।
नवल नवतन चतुर सुंदर मनु नानक तिसु संग बीधि ॥ (पृ० १००६)

नानक जी को तो यही चिंता सताती रहती है कि यदि उस कन्हैया का स्मरण नहीं किया तो सारा जन्म ही वृथा हो जाएगा :

अब मै कहा करउ री माई ।
सगलि जनमु बिखिअन सिउ खोइआ सिमरिओ नाही कन्हाई ॥
(पृ० १००८)

गुन गोबिंद गाइओ नही जनमु अकारथ कीन ।
कहु नानक हरि भजु मना जिहि बिधि जल कौ मीन ॥ (पृ० १४२६)

फिर कृष्ण के चरणों का आसरा मिलने पर मनुष्य को किस बात की चिन्ता, किस बात की सोच ? ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

किआ तू सोचहि किआ तू चितवहि किआ तूं करहि उपाए ।
ताकउ कहहु परवाह काहू की जिह गोपाल सहाए ॥ (पृ० १२६६)

ग्रंथ साहिब जी की यही वाणी महाराजा रणजीत सिंह जी के हृदय में कटक नदी पार करते समय स्फुरित हुई थी । उस समय उमड़ी हुई घोर सिन्धु नदी को पार करने में हिचकिचाती हुई सेना को उत्साहित करते हुए और सबसे आगे बढ़कर अपना घोड़ा नदी में बढ़ाते हुए उन्होंने कहा था :

सभी भूमि गोपाल की कोई अटक कहां ।
जाके मन में अटक है सोई अटक रहा ॥

इस लेख का समापन नानक जी के ही शब्दों में हम उस मोहन के चरणों को अपने हृदय में बसाते हुए करते हैं :

हे गोबिंद हे गोपाल हे दइआल लाल ।
प्रान नाथ अनाथ सखे दीन दरद निवार ॥···
हिरदै गोबिंद गाइ चरन कमल प्रीति लाइ दीन दइआल मोहन ।
···नानक मांगे नामु दानु ॥ (पृ० १३०५)

१०

गुरु, सतगुरु, वाहिगुरु

अध्यात्म के क्षेत्र में गुरु-शिष्य परम्परा भारतीय संस्कृति की मानवता को एक अनुपम देन है। हो सकता है कि कला, विज्ञान, प्राविधि आदि के क्षेत्र में बिना शिक्षक के काम चल जाय किन्तु अध्यात्म के क्षेत्र में बिना सिद्ध गुरु की कृपा के कल्याण की संभावना नहीं है। अध्यात्म का मार्ग बड़ा ही कठिन है और वेदों ने तो इसे छुरे की धार से भी अधिक तीक्ष्ण एवं दुष्कर माना है। कोई कितनी भी तपस्या कर ले, साधना और जप आदि कर ले, यदि अहम् का एक कण मात्र भी रह गया हो तो सारी तपस्या, सारी उपासना निष्फल हो जायेगी। बस यहीं पर गुरु की आवश्यकता होती है, जो अपनी कृपा के द्वारा शिष्य के हृदय में ज्ञान की ज्योति जलाकर अज्ञान के सारे अन्धकार को दूर कर देता है तथा उसे माया के जाल से मुक्त कर देता है।

जो गुरु शिष्य के हृदय में ब्रह्मज्ञान की ज्योति जगाता है वह गुरु, स्वाभाविक है, उस शिष्य के लिए पारब्रह्म के समान हो जाता है। क्योंकि पारब्रह्म का ज्ञान केवल पारब्रह्म की कृपा से ही, उस ब्रह्मतत्त्व के ज्ञाता गुरु के द्वारा ही हो सकता है। कभी-कभी ऐसा होता है कि प्रत्यक्ष रूप से कोई देहधारी गुरु न होने पर भी किन्हीं साधकों को ब्रह्मज्ञान अपने हृदय में ही प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार के ज्ञान की प्राप्ति ऐसे भाग्यशाली मनुष्य को स्वयं परमात्मा से ही प्राप्त होती है। जैसा कि भगवान कृष्ण ने गीता के दसवें अध्याय में कहा है, जो लोग मुझ में मन और प्राण लगाते हुए मेरी ही कथा, मेरी ही लीला में अपने को तृप्त रखते हैं और उसी में सन्तोष प्राप्त करते हैं, उनके हृदय में मैं स्वयं ज्ञान का दीपक जलाकर अज्ञान के अन्धकार को नष्ट कर देता हूँ।

गुरु-शिष्य परम्परा की एक विशेषता यह भी है कि यह कोई आवश्यक नहीं कि किसी एक परमज्ञानी गुरु के द्वारा सभी व्यक्तियों को ज्ञान की उपलब्धि हो सके। शुकदेव जी की कथा सभी जानते हैं। उनके परमज्ञानी, महासिद्ध पिता व्यास जी ने जब देखा कि उनके द्वारा उपदेश दिये जाने पर भी शुकदेव जी का अज्ञान दूर नहीं हो रहा है तो उन्होंने अपने पुत्र से कहा कि तुम महाराजा जनक के पास जाओ और उन्हीं को गुरु बनाओ, क्योंकि उन्हीं के उपदेश से तुम्हारे

अज्ञान की मलिनता दूर होगी।

गुरु की महिमा समझने के लिए यह बात भी ध्यान में रखनी होगी कि अध्यात्म के क्षेत्र में गुरु-शिष्य परम्परा कोई किताबी ज्ञान नहीं है, बल्कि साधना का विषय होता है। जैसे दीपक की एक ज्योति से दूसरी ज्योति जलाई जाती है, उसी प्रकार गुरु को परमात्मा के ज्ञान की ज्योति शिष्य में जगानी पड़ती है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति एवं धर्म-परम्परा में कभी यह नहीं माना गया कि कोई एक देहधारी व्यक्ति, चाहे वह कितना ही महान सिद्ध हो, अपने प्रभाव से सभी मनुष्यों के हृदय में परमात्मा के ज्ञान की ज्योति जगा सकता है। इसीलिए सनातन धर्म में पोप या पैगम्बर की तरह कोई ऐसा पद नहीं निर्मित किया गया जिसके अन्तर्गत किसी देहधारी व्यक्ति को सभी व्यक्तियों के ऊपर धार्मिक या आध्यात्मिक अधिकार दिया गया हो। शायद इसी कारण से तथा अन्य ऐतिहासिक कारणों से गुरु गोविन्दसिंह जी महाराज ने गुरु नानकदेव की परम्परा में गुरु गद्दी को ग्रंथ साहिब जी के अधीन कर दिया।

जो भी हो, अपने शास्त्रों में, अपनी इस महान संस्कृति की आध्यात्मिक परम्परा में, गुरु की महिमा अपरम्पार मानी गयी है। परमात्मा का ज्ञान देने वाला वह गुरु चाहे देहधारी हो, वेद-शास्त्र हों, गुरुनाम धारण किए हुए स्वयं गुरु ग्रन्थ साहिब जी हों, या हृदय में ज्ञान की ज्योति जगाने वाला पारब्रह्म परमात्मा हो। ये तीनों भेद तो ऊपर के हैं। असली सतगुरु तो वह पारब्रह्म परमात्मा ही है जो अपनी कृपा से अपने भक्त को किसी भी माध्यम से सच्चे ज्ञान की प्राप्ति कराता है। ग्रन्थ साहिब जी कहते है :

छिअ घर छिअ गुर छिअ उपदेस। गुरु गुरु एको वेस अनेक॥ (पृ० १२)
गुर परमेसरु एकु है सभ महि रहिआ समाइ॥ (पृ० ५३)
गुर पूरै सचु समाइआ। गुरु आदि पुरखु हरि पाइआ॥
सभि नाद बेद गुरबाणी। मनु राता सारिग पाणी॥ (पृ० ८७६)
सतिगुरु देखि मेरा मनु बिगसिओ जनु हरि भेटिओ बनवारी॥
(पृ० १२६२)
गुरु तीरथु गुरु पारजातु गुरु मनसा पूरणहारु।
गुरु दाता हरिनामु देइ उधरै सभु संसारु॥ (पृ० ५२)
गुरमुखि सासत सिम्रिति वेद। गुरमुखि पावै घट घटि भेद॥ (पृ० ६४२)
गुरु सासत सिम्रित खटु करमा। गुरु पवित्रु अस्थाना है॥ (पृ० १०७४)

सतगुरु साक्षात् पारब्रह्म परमात्मा ही हैं, इस बात को ग्रन्थ साहिब जी में बार-बार दर्शाया गया है :

राम हम सतिगुर पारब्रहम करि माने॥ (पृ० १६६)

गुरु परमेसरु पारब्रहमु गुरु डुबदा लए तराइ ॥ (पृ० ४६)
गुरदेव माता गुरदेव पिता गुरदेव सुआमी परमेसुरा ।...
गुरदेव सतिगुरु पारब्रहमु परमेसरु गुरदेव नानक हरि नमसकरा ॥
(पृ० २५०)
काहू नानक जाके पूरन करम । सतिगुर भेटे पूरन पारब्रहम ॥ (पृ० ३७८)
गुरु पारब्रहमु परमेसरु आपि । आठ पहर नानक गुर जापि ॥ (पृ० ३८७)
गुर गोविंदु गोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई ॥ (पृ० ४४२)
पारब्रहम परमेसुर सतिगुर सभना करत उधारा ।
कहु नानक गुर बिनु नही तरीऐ इहु पूरन ततु बीचारा ॥(पृ० ६११)
गुर सतिगुर कै मनि पारब्रह्म है पारब्रह्मु छड़ाई ॥ (पृ० ३१०)
पारब्रहम परमेसर सतिगुर आपे करणैहारा । (पृ० ७४६)
गुरु पारब्रहम सदा नमसकारउ ॥...
गुरु परमेसरु एको जाणु ।...
पारब्रहमु गुरु रहिआ समाइ ॥...
गुरु मेरा पारब्रहमु गुरु भगवंतु । (पृ० ८२४)
गुर पारब्रहम एकै ही जाने ॥ (पृ० ८८७)
गुरु पारब्रहमु परमेसरु सोइ ॥ (पृ० १२७१)

पारब्रह्म का ज्ञान कराने वाले गुरु में और पारब्रह्म में कोई भेद नहीं है । इस बात को ग्रन्थ साहिब जी वेद के प्रमाण से इस प्रकार कहते हैं :

नानक सोधे सिम्रिति वेद । पारब्रहम गुर नाही भेद ॥ (पृ० ११४२)

उस पारब्रह्म को जानने वाले गुरु के मुख से निकली हुई उपदेशमय वाणी ही असली शब्द है, असली वेद है और ब्रह्म का ज्ञान कराने के कारण ब्रह्मरूप ही है :

गुरमुखि बाणी ब्रहमु है सबदि मिलावा होइ । (पृ० ३६)
गुरमुखि दीसै ब्रहम पसारु । गुरमुखि त्रै गुणीआं बिसथारु ।
गुरमुखि नाद बेद बीचारु । बिनु गुर पूरे घोर अंधारु ॥ (पृ० १२७०)

ग्रन्थ साहिब जी की यह दृढ़ मान्यता है कि गुरुकृपा के बिना ज्ञान और तूरीय अवस्था की प्राप्ति असंभव है। न ही गुरु की कृपा के बिना इस त्रिगुणमयी माया को पार करके पारब्रह्म तक पहुँचा जा सकता है । केवल गुरु की कृपा से ही हरिनाम रूपी बोहित या जहाज पर चढ़ा जा सकता है । गुरु के दिए ज्ञान से ही इस पंच-भूत की माया का मल साफ हो सकता है, और जीव निर्मल हो सकता है :

सतिगुरु बोहिथु हरिनाव है कितु बिधि चड़िआ जाइ ।
सतिगुर कै भाणै जो चलै विचि बोहिथ बैठा आइ ॥ (पृ० ४०)
भाई रे गुरु बिन गिआनु न होइ ॥

पुछहु ब्रहमि नारदे वेद बिआसै कोइ तूरी आवस्था गुरमुखि पाईऐ ॥
(पृ० ३५६)
त्रै गुण माइआ ब्रहम की कीन्ही कहहु कवन बिधि तरीऐ रे।
घूमन घेर अगाह गाखरी गुर सबदी पारि उतरीऐ रे ॥ (पृ० ४०४)
उबरे सतिगुर की सरणाई। जाकी सेव न बिरथी जाई ॥ (पृ० ६१६)
जाकै सिमरनि कलमल जाहि। तिसु गुर की हम चरनी पाहि ॥
सास सास पारब्रहमु अराधी अपुने सतिगुर कै बलि जाई ॥ (पृ० १३३८)
बिनु सतिगुर किनै न पाई परमगते। पूछहु सगल बेद सिम्रते।
(पृ० १३४८)

भला ऐसे सतगुरु की, जिसकी कृपा से ब्रह्म की प्राप्ति होती हो, क्यों नहीं ग्रन्थ साहिब जी हर प्रकार से सेवा करने का उपदेश दें ?

क्यों नहीं ऐसे सतगुरु की दिन-रात पूजा की जाए क्यों ? क्यों नहीं ऐसे ही गुरु का निरन्तर ध्यान बना रहे ?

हम मलि मलि धोवह पाव गुरू के जो हरि हरि कथा सुनावै। (पृ० १७२)
सो सतिगुरु पूजहु दिनसु राति जिनि जगंनाथु जगदीशु जपाइआ।
सो सतिगुरु देखहु इक निमख निमख जिनि हरि का पंथु बताइआ ॥
(पृ० ५८६)

ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार युगों-युगों में महान भक्तों ने, योगी सिद्ध पुरुषों ने, जनक जैसे राजर्षियों ने और सनकादि जैसे परम ऋषियों ने गुरु की ही कृपा से परमात्मा की प्राप्ति की :

गुरमुखि प्रहिलादि जपि हरि गति पाई।
गुरमुखि जनकि हरिनामि लिव लाई ॥
गुरमुखि बसिसटि हरि उपदेसु सुणाई।
बिनु गुर हरिनामु न किनै पाइआ मेरे भाई।
गुरमुखि हरि भगति हरि आपि कहाई ॥ (पृ० ५९१)
गुर कै सबदि तरे मुनि केते इंद्रादिक ब्रहमादि तरे।
सनक सनंदन तपसी जन केते गुरपरसादी पारि परे ॥ (पृ० ११२५)

इस बात को हम पुनः दोहराते हैं कि ग्रन्थ साहिब जी के अनुसार सच्चा गुरु वही है जिसने ब्रह्म को पहचान लिया है और जो केवल हरि की कथा में ही लीन रहता है : "ब्रहमु बिदे सो सतिगुरु कहीऐ हरि हरि कथा सुणावै।"

यहाँ हम थोड़ी सी चर्चा वाहिगुरु शब्द के बारे में भी करना चाहेंगे। इस शब्द का प्रयोग गुरु ग्रन्थ साहिब जी के आखिरी पन्नों में विशेषकर भाटों की वाणी में आया है। इस शब्द से नानक जी और उनकी परम्परा में अन्य गुरुओं के प्रति

कृतज्ञता प्रदान की गयी है। साथ ही गुरुकृपा से इतने सहज तरीके से परमात्मा की प्राप्ति पर आश्चर्य एवं निष्ठा से भरी कृतज्ञता दर्शायी गयी है। कनिंघम ने अपनी सिक्ख इतिहास की पुस्तक में, जो १८४९ ई० में प्रकाशित हुई थी, उस समय के सिक्ख समाज में प्रचलित एवं पुराने सिक्ख लेखकों का हवाला देते हुए और वाहिगुरु शब्द में आये चार अक्षरों का विवेचन करते हुए कहा है कि सतयुग में भगवान का वासुदेव नाम, त्रेता में हरिनाम, द्वापर में गोविन्द नाम और कलियुग में रामनाम सभी प्राणियों को भवसागर से पार कर देता है। यदि चारों नामों को एक साथ मिला कर लिया जाय तो फिर कहना ही क्या है।

जैसाकि हमने इस लेख के शुरू में कहा है, असली गुरु या सतगुरु तो पारब्रह्म परमात्मा ही है। फिर वह चाहे अपना ज्ञान किसी देहधारी व्यक्ति के माध्यम से दे या महान धार्मिक ग्रन्थ के माध्यम से या फिर स्वयं ही मनुष्य के हृदय में ज्ञान की ज्योति जला दे। ऐसा ग्रन्थ भी जिसके अन्दर आदि-ज्ञान का संचय हो, जिसमें परमात्मा के ज्ञान, भक्ति और प्रेम की धारा बह रही हो, जिसमें मनुष्य की बात तो दूर रही प्रत्येक जड़-चेतन पदार्थ में एक परमात्मा की ही सत्ता दर्शायी जाती हो, निश्चय ही प्राणीमात्र का गुरु है। श्रद्धा से पढ़ने वालों को ऐसा ग्रन्थ निश्चय ही भगवत्ज्ञान की प्राप्ति कराता है। आदि श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी इस दृष्टि से निश्चय ही सतगुरु रूप में आज हमारे सामने विराजमान हैं और इस घोर कलियुग में मायासागर को पार करने के लिए तथा प्राणीमात्र को परमात्मा के पास पहुँचाने के लिए एक दृढ़ एवं सुखद जहाज के समान हैं।

११

ओंकार

वेद-शास्त्रों में प्रतिपादित जो ज्ञान एवं धर्म-समूह हैं अथवा ऋषि-मुनियों और सिद्धों ने, अनादि काल से, समाधिस्थ अवस्था में, जिस ज्ञान और धर्म-समूह का साक्षात्कार किया है उसके मूल में ओम् या ओंकार या प्रणव ही रहा है। गीता के १७ वें अध्याय में भगवान ने कहा है कि 'ओम् तत् सत्' यही ब्रह्म का उच्चारण है और इस ओम् से ही सृष्टि के आदि में सारे वेद, यज्ञ इत्यादि निर्मित हुए। इसीलिए गीता के अनुसार सभी वेद-प्रतिपादित कर्म जैसे यज्ञ, तप, दान, ओम् कह कर ही शुरू किए जाते हैं। यही कारण है कि वेदो के मंत्रों के शुरू में ओम् शब्द का ही प्रयोग होता है। वेदों के बाद आदि गुरु ग्रन्थ साहिब जी ही ऐसा ग्रन्थ है जिसका प्रत्येक अध्याय एवं विभाग विधिवत ओम् शब्द से ही प्रारम्भ होता है, 'ओं सतगुर प्रसादि' इन तीन शब्दों के बाद ही आगे की वाणी शुरू होती है। प्रत्येक मुख्य अध्याय इस वाणी से शुरू होता हैं: "ओं सतिनामु करता पुरुख निरभउ निरवैर अकाल मूरति अजूनि सैभं गुरप्रसादि।"

ओम् को शब्द-ब्रह्म भी कहा जाता है, क्योंकि इस नादब्रह्म से ही समस्त सृष्टि की रचना हुई है। वेदों के अनुसार यह सारा जगत ओंकार मात्र ही है। जो कुछ भूतकाल में हो चुका है, जो वर्तमान में है और जो भविष्य में होने वाला है और इन तीनों कालों से परे भी यदि कोई तत्त्व है तो वह सब ओंकार ही है। यह सारा जगत केवल ओंकार की ही व्यवस्था मात्र है। ओंकार की महत्ता जताते हुए वेदों में आता है कि इस चराचर विश्व का आधार या रस यह पृथ्वी है, पृथ्वी का रस जल है, जल का रस औषधियाँ हैं, औषधियों का रस मनुष्य-शरीर है, मनुष्य-शरीर का रस वाणी है, वाणी का रस ऋचाएँ हैं, ऋचाओं का रस साम है और साम का रस ओंकार है। यह अन्तिम आठवाँ रस ओंकार ही पारब्रह्म परमात्मा का स्वरूप है। ग्रंथ साहिब जी भी कहते हैं :

ओअंकार आदि मै जाना। लिखि अरु मेटै ताहि न माना॥
ओंअंकार लखै जउ कोई। सोई लखि मेटणा न होई॥ (पृ० ३४०)

इस ओंकार से ही ब्रह्म और वेद उत्पन्न हुए हैं। इस सम्बन्ध में ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

ओअंकारि ब्रहमा उतपति। ओअंकारि किआ जिनि चिति।
ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए॥
ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरमुखि तरे॥
ओनम अखर सुणहु बिचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु॥
(पृ० ९२९-३०)

ओअंकारि सभ स्रिसष्टि उपाई।
सभु खेलु तमासा तेरी वड़ियाई॥ (पृ० १०६१)

ओंकार को नमस्कार करते हुए नानक जी की ग्रन्थ साहिब के पृष्ठ २५० पर यह वाणी आती है :

ओअं साध सतिगुर नमसकारं। आदि मधि अंति निरंकारं।
आपहि सुंन आपहि सुख आसन। आपहि सुनत आपहि जासन।
आपनि आपु आपहि उपाइयो। आपहि बाप आपहि माइयो।
आपहि सूखम आपहि असथूला। लखी न जाई नानक लीला॥

इस समस्त चराचर जगत के उत्पत्तिकर्त्ता ओंकार की उपासना के दो विभिन्न फल बतलाये गए हैं। एक तो यह कि ओंकार की उपासना से इस लोक या अन्य लोकों के सभी भोगों की प्राप्ति की जा सकती है। वेदों के अनुसार इस त्रिलोकी में ऐसी कोई वस्तु नहीं है, ऐसा कोई पद नहीं है जो ओंकार की साधना से सुलभ नहीं होता। चूँकि अनन्त सृष्टियाँ हैं और अनन्त भोग के स्थान हैं, इसलिए इनकी प्राप्ति के लिए ओंकार की साधना के भी सहस्रों मार्ग हैं।

ओंकार की उपासना का महान फल है पारब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति और यही असली फल है, यही असली उपासना है। वेद कहते हैं कि ओंकार को धनुष मानो और जीवात्मा को बाण। पारब्रह्म परमात्मा इस बाण का लक्ष्य है। साधक एकाग्र चित्त से, ओंकाररूपी धनुष की सहायता से, ब्रह्मरूपी लक्ष्य को सहज ही प्राप्त हो जाता है। वेद एक उपमा और देते हैं। उपमा उन दो सूखी अरनियों (लकड़ियों) की है जिनको रगड़ने से अरनियों में छिपी आग प्रकट हो जाती है। वेद कहते हैं कि शरीर को नीचे की अरनी बनाओ तथा ओंकार को ऊपर की अरनी और फिर ध्यानरूपी मंथन के द्वारा हृदय में ब्रह्मरूपी अग्नि को प्रत्यक्ष करो। ओंकार की परमात्मा रूप में एक और बलवती प्रार्थना वेदों में आती है जो इस प्रकार है : "जो वेदों में सर्वश्रेष्ठ है, सर्वरूप है, जो अमृत-स्वरूप वेदों से प्रधान रूप में प्रकट हुआ है, वह सबका स्वामी ओंकार-स्वरूप परमात्मा हमें धारणयुक्त बुद्धि से सम्पन्न करे। हे देव ! मैं आपकी कृपा से अमृतमय

परमात्मा को अपने हृदय में धारण करने वाला बन जाऊँ।"

गुरु ग्रन्थ साहिब जी ने, इस सर्वव्यापी ओंकार की उपासना के द्वारा उस सर्वव्यापी परमात्मा की प्राप्ति कितने सहज भाव से होती है, इस भाव को अपनी वाणी में इस प्रकार दर्शाया है :

ओं अंकारि एको रवि रहिआ सभु एकहि एकस माहि समावैगो ।।
एको रूपु एको बहुरंगी सभु एकतु बचनि चलावैगो ।।
गुरु मुखि एको एकु पछाता गुरुमुखि होई लखावैगो ।।
गुरमुखि जाई मिलै निज महलो अनहद सबदु बजावैगो ।।

एक स्वाभाविक जिज्ञासा होती है कि ग्रन्थ साहिब जी में ओं शब्द के पहले गणित का अंक १ लिखा रहने का क्या रहस्य हैं? सिक्ख ग्रन्थी जब भी ग्रन्थ साहिब जी का पाठ करते हैं तो हमेशा गणित के अंक १ का भी उच्चारण करते हुए "एको ओंकार" बोलते हैं।

जैसे हमने ऊपर चर्चा की, ओंकार से ही अनन्त सृष्टियाँ और उनके भोग उत्पन्न हुए हैं और ओंकार की विभिन्न रूप में उपासना से इन भोगों को प्राप्त किया जा सकता है। किन्तु वेदों के अनुसार भोगों की प्राप्ति के लिए ओंकार की ये भेद-युक्त उपासनाएं सीमित फल देने में ही समर्थ हैं। दूसरे शब्दों में, ओंकार की अंशरूप में उपासना करने से पारब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती। केवल इस लोक और परलोक के भोग ही प्राप्त हो सकते हैं।

ओंकार के मुख्य आठ भेद माने गए हैं—अ, उ, म, अर्द्धमात्रा, बिन्दु, नाद, कला और शक्ति। इनमें केवल 'अ' मात्रा को ही दस हजार भेदों वाला माना गया है। 'उ' के एक हजार और 'म' के सौ भेद माने गए हैं। इस प्रकार अन्य कलाओं के भी सहस्रों भेद माने जाते हैं और वे आपस में एक दूसरे से सम्बन्धित होकर उपासना के लिए अनन्त भेदों को प्राप्त हो जाते हैं। इनमें भी वेदों ने ब्रह्म के चार पादों की तरह ओंकार के चार ही मुख्य भेद माने हैं—अ, उ, म, और मात्रा-रहित ओंकार। इनमें 'अ' स्थूल एवं जागृत जगत तथा इसके अधिष्ठाता वैश्वानर का स्वरूप माना जाता है, 'उ' स्वप्न, सूक्ष्म एवं तेजस आत्मा का प्रतीक माना जाता है, और 'म' कारण, सुषुप्ति (स्वप्न-रहित निद्रा की अवस्था) तथा प्राज्ञ आत्मा का प्रतीक होता है। इन तीनों से परे मात्रा-रहित ओंकार में स्थित मनुष्य ही निरविकल्प, पारब्रह्म, परमात्मा को प्राप्त हो सकता है। इस अवस्था में सारी सृष्टियों का, सारे भोगों की कामनाओं का अन्त हो जाता है।

इसलिए वेदों का कहना है कि ओंकार की उपासना टुकड़े-टुकड़े करके नहीं करनी चाहिए बल्कि सम्पूर्ण रूप में ही करने से साधक परमात्मा तक पहुंचने में

समर्थ होता है। हमारे विचार से ग्रन्थ साहिब जी में वेद-वर्णित ओंकार-उपासना के इस गणित को १ लिखकर इतने सरल भाव से रखा है कि साधारण से साधारण व्यक्ति भी इस रहस्य को समझ ले। १ ओंकार का यह भी अर्थ है कि ओम् की उपासना या जप सम्पूर्ण रूप में यानी परमात्मा की प्राप्ति के लिए ही करना चाहिए। १ ओंकार का यह भी अर्थ है कि १ ओंकार-स्वरूप परमात्मा ही सत्य है और केवल उसी का अस्तित्व है, ओंकार के अतिरिक्त जो कुछ भी है वह सब मिथ्या है। केवल १ ओंकार की उपासना द्वारा ही पारब्रह्म परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है।

१२

नाम

शास्त्रों ने नाम और नामी में कोई भेद नहीं माना है। नामी अपने नाम के अधीन माना जाता है। लोकव्यवहार में भी हम जिस व्यक्ति का नाम पुकारते हैं वही व्यक्ति जवाब देता है और जिस वस्तु के नाम का ध्यान करते हैं वही वस्तु आंखों के सामने आती है। वेदों का यह मत है कि साधक जब श्रद्धापूर्वक परमात्मा का नाम लेता है तब उस नाम की साधना ही आगे जाकर परमात्मा के सतत् ध्यान में बदल जाती है और वह ध्यान अन्ततः परमात्मा से समाधि-स्वरूप योग यानी मिलाप करा देता है। ग्रन्थ साहिब जी में नाम का बड़ा भारी गुणगान किया गया है। उसका प्रमाण यही है कि ग्रन्थ साहिब जी में लगभग पांच हजार बार 'नाम' शब्द का प्रयोग हुआ।

नाम से ही परमात्मा की प्राप्ति होती है, यह भाव दर्शाते हुए ग्रन्थ साहिब जी बड़े स्पष्ट रूप से घोषणा करते हैं :

अनदिनु रतिआ दुखु बिखिआ बिचहु जाइ।
नानक सबदि मिलावड़ा नामे नामि समाइ॥ (पृ० ३५)
अनदिनु नामे रतिआ नानक नामि समाइ॥ (पृ० ३६)
नानक अनदिनु नामु धिआइ तू अंतरि
जितु पावहि मोख दुआर॥ (पृ० १२४८)

लख-चौरासी योनियों के चक्र से छूटने का सरलतम उपाय तो नाम-स्मरण ही है और उसी के द्वारा मोक्षरूपी परमसुख को प्राप्त किया जा सकता है :

लख चउरासीह फेरु पइया बिनु सबदै मुकति न पाए।
जा नाउ चेतै ता गति पाए जा सतिगुरु मेलि मिलाए॥ (पृ० ६७)
नामु जपे नामो आराधे नामे सुखि समावै॥ (पृ० १३६)

नानक जी कहते हैं कि हम कितने भी दान-पुन्य कर लें, वे नाम के तुल्य नहीं है :

किछु पुंन दान अनेक करणी नाम तुलि न सम सरो॥

परन्तु इस भगवत्नाम की प्राप्ति तभी होती है जब शरीर के प्रति अहम्

भावना मिट जाती है और मनुष्य अपने सांसारिक राग-द्वेषों से ऊपर उठ जाता है :

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ ।
हउमै विचि सेवा न होवई ता मनु बिरथा जाइ ।। (पृ० ५६०)

वेद-शास्त्रों का प्रमाण देते हुए ग्रंथ साहिब जी कहते हैं कि कलियुग में तो मुक्ति या भगवत्साक्षात्कार या परमात्मा की प्राप्ति केवल 'नाम' से ही सुलभ है :

कल मै एकु नामु किरपानिधि जाहि जपै गति पावै ।
अउर धरम ताकै समि नाहनि इस विधि बेदु बतावे ।। (पृ० ६३२)
सिम्रिति बेद पुराण पुकारनि पोथीआ ।
नाम बिना सभि कूडु गाल्ही होछीआ ।। (पृ० ७६१)
सासत्र सिम्रिति नामु द्रिडामं ।
गुरमुखि सांति ऊतम करामं । (पृ० ८३१)

नामु जपहु नामे गति पावहु सिम्रिति सासत्र नामु द्रिड़ईआ ।। (पृ० ८३४)

ग्रन्थ साहिब जी की यह भी घोषणा है कि वेद-शास्त्र मनुष्यों को नामजप करने की प्रेरणा देते हैं और उनके हृदय में नाम को ही दृढ़ रूप से स्थापित करते हैं :

कलिजुग महि इक नामि उधारु । नानकु बोलै ब्रहम बीचारु ।। (पृ० ११३८)
नामु हमारै बेद अरु नाद । नामु हमारै पूरे काज ।
नामु हमारै पूजा देव । नामु हमारै गुर की सेव ।। (पृ० ११४५)
बेद बाणी जगु वरतदा त्रै गुण करे बीचारु ।
बिनु नावै जप डंडु सहै मरि जनमै बारोबार ।। (पृ० १२७६)

ग्रन्थ साहिब जी डंके की चोट घोषणा करते है कि नाम की महिमा चारों युगों में रही है। कलियुग में तो इसकी महिमा और अधिक इसलिए बढ़ जाती है कि कलियुग में बढ़ते हुए पाप के कारण धर्म की एक ही कला रह जाती है, धर्मरूपी बैल के चार पांव में से एक ही पांव रह जाता है। उस स्थिति में भी, इस पापमय कलियुग में भी नाम के द्वारा पापी से पापी मनुष्य अपना उद्धार कर सकता है। चारों युगों में धर्म की स्थिति का वर्णन करते हुए ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं :

सतजुगि सचु कहै सभु कोई । घरि घरि भगति गुरमुखि होई ।
सतजुगि धरमु पैर है चारि । गुरमुखि बूझै को बिचारि ।।...
त्रैते इक कल कीनी दूरि । पाखंडु वरतिआ हरि जाणनि दूरि ।

गुरमुखि बूझै सोझी होई । अंतरि नामु वसै सुखु होई ।।
दुआपुरि धरमि दुइ पैर रखाए । गुरमुखि होवै त नामु द्रिड़ाए ।।
कलजुगि धरम कला इक रहाए । इक पैरि चलै माइआ मोहु वधाए ।।
माइआ मोहु अति गुबारु । सतगुरु भेटै नामि उधारु ।।
सभ जुग महि साचा एको सोई । सभ महि सचु दूजा नही कोई ।।
सभ जुग महि नामु ऊतमु होई । गुरमुखि विरला बूझै कोई ।।
हरि नामु धिआए भगतु जनु सोई । नानक जुगि जुगि नामि वडिआई होई ।।
(पृ० ८८०)

सतजुगि सभु संतोख सरीरा पग चारे धरमु धिआनु जीउ ।···
तेता जुगु आइआ अंतरि जोरु पाइआ जतु संजम करन कमाइ जीउ ।···
पगु चउथा खिसिआ त्रै पग टिकिआ मनि हिरदै क्रोधु जलाइ जीउ ।···
जुगु दुआपरु आइआ भरमि भरमाइआ हरि गोपी कान्हु उपाइ जीउ ।···
(पृ० ४४५)

कलिजुगु हरि कीआ पग त्रै खिसकीआ पगु चउथा टिकै टिकाइ जीउ ।
जन नानकि गुरु पूरा पाइआ मनि हिरदै नामु लखाइ जीउ । (पृ० ४४६)

इसु कलिजुग महि करम धरमु न कोई ।
कली का जनमु चंडाल कै घरि होई ।।
नानक नाम बिना को मुकति न होई ।। (पृ० १६१)
सतजुगि सतु तेता जगी दुआपरि पूजाचार ।
तीनौ जुग तीनौ दिड़े कलि केवल नाम अधार ।। (पृ० ३४६)

जब नाम की इतनी महिमा है, और जब भगवान की प्राप्ति के द्वार को खोलने के लिए नामरूपी चाभी इतनी सुलभता से उपलब्ध है तो भला नानक जी क्यों नहीं सबको अपनी जीभ से केवल भगवान के नामोच्चारण का उपदेश दें, क्यों न उनके हृदय में रामनाम की भूख दिन-रात लगी रहे ? और क्यों न वे सोते-जागते, उठते-बैठते सांस-सांस में भगवान के नाम का उच्चारण करें, सांस सांस में भगवान को ही बसाएँ ?

रसना उचरंति नामं स्रवणं सुनंति सबद अंम्रितह ।
नानक तिन सद बलिहारं जिना धिआनु पारब्रहमणह ।। (पृ० ७०६)
हरि हरि नाम की मनि भूख लगाई ।
नामि सुनिऐ मनु त्रिपतै मेरे भाई ।। (पृ० ३६७)
सीतलु हरि हरि नामु सिमरत तपति जाइ ।। (पृ० ३९९)
अंतरि गावउ बाहरि गावउ गावउ जागि सवारी ।
संगि चलन कउ तोसा दीन्हा गोबिन्द नाम के बिउहारी ।।···

दूखनि गावउ सुखि भी गावउ मारगि पंथि सम्हारी ।
नाम द्रिड़ु गुरि मन महि दीआ मोरी तिसा बुझारी ॥
दिनु भी गावउ रैनी गावउ गावउ सासि सासि रसनारी ॥
(पृ० ४०१)

सासनि सासि सासि बलु पाईऐ निहसासनि नामु धिआवैगो ।
गुरपरसादी हउमै बुझै तौ गुरमति नामि समावैगो ॥...
ओअंकारि एको रवि रहिआ सभु एकस माहि समावैगो ।
एको रूपु एको बहुरंगी सभु एकतु बचनि चलावैगो ॥ (पृ० १३१०)

ग्रंथ साहिब जी के अनुसार उन व्यक्तियों का जीवन धिक्कारने योग्य है जो नामरूपी अनमोल कुंजी को पाकर भी उसका उपयोग नहीं करते । ऐसे व्यक्ति निश्चय ही पृथ्वी के लिए भार हैं और उनका मुख देखना भी पाप है । ऐसे व्यक्ति करोड़ों प्रकार के बड़े-बड़े कर्मों को करते हुए भी नरक को ही जाते हैं :

नाम हीन कालख मुखि माइआ ।
नाम बिना धिगु धिगु जीवाइआ ॥ (पृ० ३६६)
नाम बिना जो पहिरै खाइ ।
जिउ कूकरु जूठन महि पाइ ॥
नाम बिना जेता बिउहारु ।
जिउ मिरतक मिथिआ सीगारु ॥
नामु बिसारि करै रस भोग ।
सुखु सुपनै नहीं तन माहि रोग ॥
नाम तिआगि करे अन काज ।
बिनसि जाइ झूठे सभि साज ॥
नाम संगि मनि प्रीति न लावै ।
कोटि करम करतो नरकि जावै ॥ (पृ० २४०)
बिसरिआ जिन्ह नामु ते भुइ भारु थीए ॥ (पृ० ४८८)
किलबिख सभे उतरनि नीत नीत गुणगाउ ।
कोटि कलेसा ऊपजहि नानक बिसरै नाउ ॥ (पृ० २२)
फरीदा तिना मुख डरावणे जिना बिसारिओनु नाउ ।
ऐथै दुख घणेरिआ अगै ठउर न ठाउ ॥ (पृ० १३८३)
रे गुन हीन दीन माइआ क्रिम सिमरि सुआमी एक घरी ॥ (पृ० १३८७)
इकसु हरि के नाम बिणु धिगु जीवणु धिगु वासु ॥ पृ० ६४६)

बस नानक जी के प्राणों का आधार तो उस गोविन्द, दामोदर, माधवरूप पारब्रह्म परमात्मा का ही नाम सुमिरन ही है :

गोबिंद दामोदर दइआल माधवे पारब्रहम निरंकारा।
नामु वरतणि नामो वालेवा नामु नानक प्रान अधारा॥ (पृ० ६१४)

नानक जी उस अपने गुरु पारब्रह्म परमात्मा रूपी गोपाल से केवल उनके नाम की ही याचना करते हैं :

नाम दानु जांचत नानक दैनहार गुर गोपाला॥ (पृ० १३५५)

नाम की महानतम महिमा का बखान करते हुए संत रविदास जी की वाणी में ग्रन्थ साहिब जी कहते हैं कि इस रामनाम की, इस गोविन्द नाम की महिमा तो देखो कि यद्यपि मेरी जाति के लोग बनारस के आसपास मरे जानवरों को ढोते हैं और उनकी खाल उतारने का काम करते हैं फिर भी इस नाम की महिमा के कारण आज बनारस के प्रधान-प्रधान ब्राह्मण मुझे हाथ जोड़कर तथा दण्डवत होकर प्रणाम करते हैं :

मेरी जाति कुटबांढला ढोर ढोवंता नितहि बानारसी आस पासा।
अब बिप्र परधान तिहि करहि डंडउति तेरे नाम सरणाइ रविदासु दासा।...
बिआस महि लेखिऐ सनक महि पेखिऐ नाम की नामना सपत दीपा।...
जा के कुटंब के ढेढ सम ढोर ढोवंत फिरहि अजहु बंनारसी आस पासा।
आचार सहित बिप्र करहि डंडउति तिन तनै रविदास दासान दासा॥
(पृ० १२९३)

OUR PUBLICATIONS IN ENGLISH

		Rs.
1.	Understanding Islam Through Hadis : Religious Faith or Fanaticism? *by Ram Swarup*	80.00 HB 30.00 PB
2.	Muslim Separatism : Causes and Consequences *by Sita Ram Goel*	12.00 HB 7.00 PB
3.	Story of Islamic Imperialism in India *by Sita Ram Goel*	7.00
4.	Defence of Hindu Society *by Sita Ram Goel*	5.00
5.	Christianity : An Imperialist Ideology *by Major T.R. Vedantham, Ram Swarup and Sita Ram Goel*	5.00
6.	Perversion of India's Political Parlance *by Sita Ram Goel*	5.00
7.	History of Heroic Hindu Resistance to Muslim Invaders (636 A.D. to 1206 A D.) *by Sita Ram Goel*	4.00
8.	How I Became A Hindu *by Sita Ram Goel*	4.00
9.	Buddhism vis-a-vis Hinduism (revised edition) *by Ram Swarup*	4.00
10.	Hindu Society Under Siege *by Sita Ram Goel*	4.00
11.	Hinduism vis-a-vis Christianity and Islam *by Ram Swarup*	3.00
12.	Hindu-Sikh Relationship *by Ram Swarup*	3.00
13.	Thc Emerging National Vision *by Sita Ram Goel*	2.50
14.	The Hindu View of Education *by Ram Swarup*	2.00
15.	The Dead Hand of Islam *by Colin Main*	1.50

Postage included

Remit full price by M.O. or D. D.

Outstation cheques not accepted

A Path-Breaking Publication

UNDERSTANDING ISLAM THROUGH HADIS

Religious Faith or Fanaticism ?

by Ram Swarup

In the language of Muslim theologians, Islam is a "complete" and "completed" religion, dealing not merely with theological matters but with all aspects of the believer's life, and superseding all previously revealed religions, such as Judaism and Christianity. Islam has two primary sources : *Quran*, comprising the revelations vouchsafed to Prophet Muhammad by Allah, and the *Hadis*, an extensive body of authentic traditions focusing on Muhammad's personal life and practice and transmitted by people who actually knew him.

Both the *Quran* and the *Hadis* are regarded as works of revelation or divine inspiration : only the mode of expression differs. The *Hadis* is the *Quran* in action, revelation made concrete in the life of the Prophet. In the early centuries of Islam, many thousands of *ahadis*, or traditions, were collected and sifted, and those considered reliable were written down, forming six collections (*sahis*) considered orthodox by Muslims even today. Ram Swarup quotes extensively from them, particularly from *Sahih Muslim*, one of the top "two authentics," now available in English translation. He also quotes from other traditional sources, including the *Quran* and the orthodox biographies of the Prophet (*siras*), in order to provide a unique glimpse of Islam's teachings and practices.

The new fundamentalism that is sweeping the Muslim world is little understood by the rest of the world. Prophetic Islam is based on an intolerant idea, and it has its own version of the "white-man's burden" of rooting out polytheism and unbelief. The "infidel" world will do well to undertand this mind. This, Sri Swarup says, can best by done through studying the *Hadis* and by learning what kind of man Muhammad really was, for the *Hadis* literature "gives a living picture of Islam at its source and of Islam in the making,

providing an intimate view of the elements that constitute orthodox Islam in their pristine purity... ..the very elements of Islam that Muslims find most facinating," repeatedy, motivated by a compulsive atavism, appealing to them and reverting to them.

Thoroughly researched and documented, *Understanding Islam Through Hadis* is a valuable reference and source of scholarly insight for theologian and layperson alike.

Published in the U.S.A., 1983
Indian Reprint, 1984

Demy Octavo | Price Rs. 80.00 HB | Pages 287
,, 30.00 PB

हमारे हिन्दी प्रकाशन

१. उदीयमान राष्ट्रदृष्टि
सीताराम गोयल — रु० २.००

२. हिन्दू समाज : संकटों के घेरे में
सीताराम गोयल — रु० ४.००

३. सैक्युलरिज्म : राष्ट्रद्रोह का दूसरा नाम
सीताराम गोयल — रु० ४.००

डाक खर्च मूल्य में शामिल है।
मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेजिए।

भारत-भारती
२/१८, अन्सारी रोड़,
नई दिल्ली-११० ००२

आवेदन

हिन्दू समाज तथा संस्कृति आज संकटग्रस्त हैं। कई-एक दस्युदल भारतवर्ष की सनातन संस्कृति का उच्छेद करने के लिए कटिबद्ध हैं। भारतवर्ष में जिस समय पहिले मुसलमानों का और फिर अंग्रेजों का विदेशी शासन था उस समय इन दस्युदलों ने अपने पांव इस देश में जमाये थे। भारतवर्ष स्वाधीन हो गया। किन्तु ये दस्युदल अब भी आक्रमण-परायण हैं। इन्होंने हिन्दू समाज और संस्कृति के विरुद्ध एक संयुक्त मोरचा बना रखा है।

भारत-भारती ने विचारात्मक दृष्टि से हिन्दू समाज तथा संस्कृति का बचाव करने का व्रत लिया है। यह काम एक प्रकाशन-माला के माध्यम से किया जा रहा है। अभी तक जो भी प्रकाशन हमारी ओर से निकले हैं उनका बहुत स्वागत हुआ है।

मानवबुद्धि सदा ही सत्य के प्रति आग्रहशील रही है। अतएव इस संघर्ष में सत्य ही हमारा एकमात्र अस्त्र है। एक ओर हिन्दू समाज तथा संस्कृति के सम्बन्ध में और दूसरी ओर दस्युदलों के सम्बन्ध में समूचे सत्य का उद्घाटन होना चाहिए।

हम प्रत्येक हिन्दू को आमन्त्रित करते हैं कि वह १) हमारे प्रकाशन अधिक से अधिक सँख्या में खरीद कर जिज्ञासु जनों को पढ़ाए और २) हमारे सत्यशोधक-कोष मे उदारहृदय से दान दे। हमारे लिये दान की कोई भी राशि न छोटी है, न बड़ी। चैक, बैंक ड्राफ्ट, पोस्टल आर्डर तथा मनीआर्डर, भारत-भारती, २/१८, अन्सारी रोड, नई दिल्ली-११०००२ के पते पर भेजें।

भारत-भारती, २/१८, अन्सारी रोड़, नई दिल्ली-११०००२ से सीताराम गोयल द्वारा प्रकाशित एवं ए.जी. प्रिंटिंग प्रेस, १/९३४६-बी, वेस्ट रोहतास नगर, शाही मोहल्ला, शाहदरा, दिल्ली-११० ०३२ द्वारा मुद्रित।